अनीश्वरवादियों के सन्देह

सैयद हामिद अली

अनीश्वरवादियों के सन्देह

लेखक
सैयद हामिद अली
अनुवादक
कौसर यज़दानी

इदारा शहादते हक़
८०१, छत्ता शेख़मंगलू, जामा मस्जिद
दिल्ली-११०००६

विषय-सूची

क्या ?	कहां ?
१. क्या खुदा इंसानी कमज़ोरी की पैदावार है ?	५
२. इंसान की कमज़ोरी	६
३. आशा और निर्भयता का रहस्य	१३
४. अनीश्वरवाद या प्रत्यक्ष प्रकृति का आतंक ?	१८
५. क्या खुदा के लिए रचयिता चाहिए ?	२४
६. क्या दुनिया में अंधेर है ?	३८

अपनी बात

'अनीश्वरवाद-विरोध' से संबंधित 'इदारा शहदते हक़' की चौथी ग्रंथ-माला 'अनीश्वरबादियों के सन्देह' सेवा में प्रस्तुत है, इस पर हम अल्लाह का दिल की गहराई से शुक्र अदा करते हैं।

इस पुस्तक में 'अनीश्वरवादियों के सन्देहों' का एक-एक करके उल्लेख किया गया है, पर पृष्ठों की कमी के कारण इस का हक़ अदा नहीं हो पाया है। इस विषय और अन्य विषयों के लिए इस सेट की अगली और अन्तिम पुस्तक 'विज्ञान और भौतिकवाद' का अध्ययन उपयोगी रहेगा।

हम अल्लाह से दुआ करते हैं कि जिस उद्देश्य के लिए ये पुस्तकें तैयार की गयी हैं, उसे पूरा करे और इस काम को आगे बढ़ाने के लिए वह हम पर अतिरिक्त कृपा करे।

—प्रकाशक

अल्लाह—कृपाशील, दयावान के नाम से

क्या ख़ुदा इंसानी कमज़ोरी की पैदावार है ?

ख़ुदा इंसानी कमज़ोरी की पैदावार है, यह एक विचार है, जिसे अनीश्वरवादी पूरी गम्भीरता के साथ सामने लाते हैं। इन लोगों के नज़दीक इंसान प्राचीनकालों से ख़ुदा को केवल इसलिए मानता रहा है कि उस ने अपने आप को कमज़ोर महसूस किया, उसे सहारे की खोज हुई और उसने एक हस्ती की कल्पना करके उसे ख़ुदा का नाम दे दिया। वर्तमान युग का इंसान प्रकृति पर विजय पा चुका है, इस लिए उसे ऐसी हस्ती की कल्पना करने की ज़रूरत नहीं। आज का इंसान स्वयं अपनी शक्ति पर भरोसा रखता है, वह आप अपना दुःख दूर कर लेता है, वह आप अपना ख़ुदा है।

पर क्या यह वस्तुस्थिति का सही चित्रण है ? क्या ख़ुदा को केवल इस लिए माना गया कि इंसान को एक सहारे की खोज थी और उसने किसी ठोस तर्क के बिना एक काल्पनिक हस्ती को सहारा बना लिया ? क्या मानव के निज में या सृष्टि में अल्लाह के वजूद पर कोई दलील नहीं है ? सृष्टि के चिह्न, मानव-मनोविज्ञान और विश्व-धर्मों का विशाल और स-तर्क साहित्य इस के खंडन के लिए पर्याप्त है और स्वयं हम 'ख़ुदा का इन्कार क्यों ?' 'ख़ुदा है !' 'क्या ख़ुदा की ज़रूरत नहीं ?' में इस समस्या पर निर्णायक वार्ता कर चुके हैं।

फिर क्या हज़ारों वर्ष की लम्बी अवधि में अन्ध विश्वासियों और थुड़दिलों ने ख़ुदा को माना और ज्ञानियों, विवेकियों, वीरों, योद्धाओं ने ख़ुदा का इंकार किया है ? यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि वर्तमान पश्चिमी सभ्यता के आधिपत्य से पहले मानव-जाति सामान्य रूप से ख़ुदा को मानती रही है और जिन ज्ञानियों और महान विभूतियों के आगे मानव-मस्तक श्रद्धा से झुक जाता है और जिन योद्धाओं और वीरों ने संसार से अपनी वीरता तथा संकल्पों का लोहा मनवा लिया है, लगभग वे सब के सब ख़ुदा को मानने वाले थे।

आज भी, जबकि अनीश्वरवाद के हाथों में सत्ता, सम्प्रभुत्व और कला और संस्कृति की अगुवाई है, इंसानों की बहुसंख्या ख़ुदा को मानती है और पूरब और पश्चिम के बहुत से चिन्तक, दार्शनिक और ज्ञानी तथा विवेकी ख़ुदा की हस्ती को स्वीकारते हैं। विज्ञान और वैज्ञानिकों का नाम अनीश्वरवाद के समर्थन में मुख्य रूप से लिया जाता है, पर क्या यह सही है ? जो व्यक्ति भी विज्ञान और वैज्ञानिकों के वर्तमान विकास को जानता होगा, वह इस का उत्तर निषेध में देगा। सच तो यह है कि विज्ञान और अनीश्वरवाद के मध्य कोई सम्पर्क नहीं, इस के विपरीत विज्ञान की तमाम खोजें और आविष्कार अल्लाह के अस्तित्त्व की ओर मार्ग-दर्शन करते हैं, इसी तरह जिन वैज्ञानिकों ने विज्ञान-जगत में गहरे प्रभाव छोड़े है, उनकी भारी संख्या ख़ुदा को मानने वाली है या कम से कम इस विषय में ख़ामोश है और इस ख़ामोशी की वजह यह है कि ख़ुदा के होने, न होने की समस्या मूलतः विज्ञान का नहीं, दर्शन का विषय है। विज्ञान भूत द्रव्य, भौतिक सृष्टि और सृष्टि के नियमों से वार्ता करती है। सृष्टि से परे कोई शक्ति है कि नहीं विज्ञान का प्रत्यक्षतः इससे कोई सम्बन्ध नहीं, विज्ञान के इसी गुण के कारण ऊपरी दृष्टि रखने वालों को यह भ्रम हुआ कि विज्ञान भौतिकवाद को मानने

वाला और ख़ुदा का इन्कारी है और जब कि कुछ वैज्ञानिकों ने ख़ुदा का इंकार कर दिया, तो लोगों ने इस इंकार को विज्ञान और उसकी गवेषणाओं का परिणाम समझ लिया, हालांकि विज्ञान ख़ुदा का इंकार करता है, यह कहना विज्ञान और उसके विषय से अज्ञान का फल या जान-बूझ कर उसका ग़लत इस्तेमाल है। 'ख़ुदा है या नहीं' यह समस्या विज्ञान के विषय से वास्तव में अलग है।

हम यह नहीं कहते कि आप ख़ुदा को केवल इसलिए मान लें कि प्राचीनतम समय से मानव-जाति उसे मानती आयी है और इन मानने वालों में बड़े-बड़े लोग शामिल हैं। निश्चय ही ख़ुदा का मानना या न मानना तर्कों ही के आधार पर होना चाहिए। हम इसी को सही समझे और हमने इसी राह को अपनाया है। अनीश्वरवादियों से भी हमारी मांग यही है कि इधर-उधर की बातें करने के बजाए वे अपने दृष्टिकोण को तर्कों से सिद्ध करें। ख़ुदा इंसानी कमज़ोरी की पैदावार है, यह कोई तर्क नहीं, मात्र एक दावा है, जिस के पीछे कोई तर्क नहीं और उसके खंडन के लिए इतनी बात काफ़ी है कि इतिहास के हर युग में बहुत-से ज्ञानी-विवेकी, वीर-योद्धा ख़ुदा के आगे सिर झुकाते रहे हैं। हां, जो लोग अपने सिवा तमाम इंसानों को अन्ध-विश्वासी और भीरु समझते हैं, वे जो चाहे फ़रमा सकते हैं, लेकिन ऐसे भ्रमग्रस्त लोग हम इंसानों के नेतृत्व और मार्ग-दर्शन और इंसानी समस्याओं को हल करने के योग्य नहीं हैं, ख़ुदा इंसानी कमज़ोरी की पैदावार है, इस तरह की फुसफुसी बातें करके अनीश्वरवादी ख़ुदापरस्ती के दृष्टिकोण को तो कमज़ोर नहीं कर सकते, हां ख़ुद अपने दृष्टिकोण को कमज़ोर कर लेते हैं। वे इस तरह इस बात का तर्क जुटाते हैं कि उनके पास व्यंग्य, उपहास और निरर्थक और निराधार बातों के सिवा कोई भी गंभीर तर्क नहीं है। कितनी आश्चर्यजनक है यह वास्तविकता कि जिन लोगों ने ख़ुदा-

परस्तों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करके उन्हें अन्धविश्वासी और निर्बुद्धि सिद्ध करना चाहा था, उन्होंने अपनी इस हरकत से स्वयं अपनी मनोवैज्ञानिक और बौद्धिक कमज़ोरी पर से पर्दा उठा दिया।

आज का भ्रमित व्यक्ति इस भ्रम में पड़ा है कि इस ने प्रकृति पर विजय प्राप्त कर ली है और इसीलिए दंभी तथा अभिमानी सिर ख़ुदा के आगे झुकने में अपना अनादर समझता है, लेकिन सच तो यह है कि यह आत्मभ्रांति के अतिरिक्त और कुछ नहीं। प्रकृति पर विजय पाने का अर्थ यह है कि इंसान प्राकृतिक नियमों की दासता से मुक्त हो जाए और उनका शासित होने के बजाए उनका शासक बन जाए, पर इस में इंसान को लेश मात्र भी सफलता नहीं मिली है और आगे भी सफलता की कोई संभावना दूर-दूर तक नहीं दीख पड़ती। इंसान प्रकृति-नियमों में जिस तरह पहले जकड़ा हुआ था, ठीक वैसे ही आज भी जकड़ा हुआ है। अन्तर केवल इतना हुआ है कि पहले इंसान को प्रकृति के थोड़े-से नियमों का ज्ञान था और अब उसे कुछ अधिक नियमों का ज्ञान हो गया है, लेकिन इस से इंसान की हैसियत में कोई अन्तर नहीं पड़ता। वह पहले भी प्रकृति-नियमों का पाबंद और सृष्टि के स्रष्टा के आदेशाधीन था और आज भी उसकी यही हैसियत बाक़ी है। पहले भी साधनों की बहुतायत, धन-दौलत का बाहुल्य और सत्ता के नशे में इंसान आपे से बाहर हो जाता और ख़ुदा के आगे सिर झुकाने में अपना अनादर समझता था और आज का इंसान भी ज्ञान और संस्कृति से सुसज्जित होकर दंभ और अभिमान के उसी अज्ञानतापूर्ण इतिहास को दोहरा रहा है। अन्तर केवल इतना हुआ है कि प्राचीन युग का दंभी तथा उद्दंड व्यक्ति ख़ुदा की अवज्ञा तो करता था, पर इसका इंकार न करता था, पर आज का दंभी व्यक्ति ख़ुदा के अस्तित्त्व ही से इंकार कर रहा है और इस तरह उसने दंभ और अभिमान की अज्ञानतापूर्ण भावना की पूर्ति कर दी है।

इंसान की कमज़ोरी

इंसान की सबसे बड़ी कमज़ोरी यह है कि वह धन और सत्ता पा कर बहुत जल्द बहक जाता है और अपने आपको भूल जाता है। वह भला और सुधारक बनने के बजाए अन्याय और बिगाड़ और पशुत्त्व की प्रतिमूर्ति बन जाता है, पहले भी यही होता रहा है और ज्ञान और संस्कृति के सम्पूर्ण विकास के बावजूद इंसान आज भी इसी कमज़ोरी का शिकार है और पहले से अधिक शिकार है। आज संसार में हर ओर बिगाड़ और विद्रोह के जो 'अखाड़े' स्थापित हैं और 'दुनिया के बड़े' जिस तरह इन अखाड़ों को बढ़ा रहे हैं और दुनिया को जानते-बूझते भयावह एटमी युद्ध की ओर धकेल रहे हैं, उसके पीछे इंसान की यही कमज़ोरी काम कर रही है। वर्तमान युग का इंसान ज्ञान-विज्ञान की ऊंचाइयों पर पहुंचने के बावजूद इस कमज़ोरी का, जो पूरी मानवता को डुबो देगी, कोई इलाज मालूम न कर सका, वह जो अन्तरिक्ष में यात्रा करने, पृथ्वी के चारों ओर चक्कर लगाने और चांद पर पहुंचने के योग्य हो गया, उसे धरती पर इंसान की तरह चलना न आया—

> ढूंढने वाला सितारों की गुज़रगाहों का,
> अपने अफ़्कार की दुनिया में सफ़र कर न सका ॥
> जिस ने सूरज की शुआओं को गिरफ़्तार किया,
> ज़िंदगी की शबे तारीक सहर कर न सका ॥[1]
>
> —इक़बाल

---

१. (कवि कहता है कि) सितारों के मार्ग की खोज लगाने वाला (व्यक्ति) अपने विचचार-जगत में विचरण न कर सका। जिस ने सूर्य की किरणों को गिरफ़्तार कर लिया, जीवन की अन्धकारमय रात को उजाले में परिवर्तित न कर सका।

इस कमज़ोरी का आज़माया हुआ और उपयोगी इलाज एक ही है और वह यह कि इंसान पर उसकी सही हैसियत स्पष्ट कर दी जाए। उसके भीतर इस बात का विश्वास पैदा कर दिया जाए कि वह अस्तित्त्वहीन था, सृष्टि के स्रष्टा ने उसे अस्तित्त्व प्रदान किया, उसे बेहतरीन क्षमताएं दीं और उसी के पालनकर्त्तृव्य के सहारे उसके जीवन की गाड़ी चल रही है। वह उसका साक्षात मुहताज है, उसकी हैसियत इस के सिवा कुछ नहीं कि वह उस का बन्दा और उसका शासित है और अपने कथन तथा कर्म में उसके सामने उत्तरदायी है। अगर उसने ईश-विस्मृति, बिगाड़, अत्याचार और मानवता-विरोध की राह अपनायी तो वह सृष्टि के महान शासक की बड़ी यातनाओं से बच न सकेगा, यहां तक कि मौत भी उस यातना के रास्ते में रुकावट न होगी। इस तीव्र और शाश्वत यातना से मुक्ति पाने की इस के सिवा कोई शक्ल नहीं है कि वह ख़ुदा का बन्दा और इन्सान बन कर रहे।

ख़ुदा की धारणा और उसके समक्ष उत्तरदायित्त्व के इस विश्वास ने धन तथा सत्ता की ऊंचाइयों पर पहुंचने के बाद भी इंसान को बहकने से बचाया है और उसे अन्यायी तथा उद्दंड बनने नहीं दिया है। इस एक विश्वास के अतिरिक्त मानवता का पूरा इतिहास इंसान को क़ाबू में रखने के किसी और उपाय से अनभिज्ञ है। कल भी यही इलाज उपयोगी था और आज भी यही इलाज उपयोगी है। अनीश्वरवादी इस इलाज को पूरी बेदर्दी से बर्बाद कर देते हैं, पर मानव-जाति को कोई और इलाज का तरीक़ा बता कर के नहीं देते। अब अगर इंसान अन्यायी तथा उद्दंड बनता है और दुनिया नाश-विनाश के भयावह खड्ड में जा गिरती है, तो उनकी बला से, वे उसके ज़िम्मेदार थोड़े ही हैं।

कहा जाता है कि इंसान पहले कमज़ोर था, इसलिए ख़ुदा को

मानने पर मजबूर था। आज का इंसान कमज़ोर नहीं है, वह अपार शक्ति रखता है, इसलिए उसे किसी अनदेखी शक्ति के आगे सिर झुकाने की आवश्यकता नहीं है, वह आप अपनी समस्याओं से निबट सकता है।

पर यह निःकृष्टतम आत्म-विस्मृति है, जिस में कोई व्यक्ति फंस सकता है। इंसान पहले भी कमज़ोर था, और आज भी है, वह पहले भी रचित था और साक्षात मुहताज था और आज भी, उसकी इस हैसियत में कोई परिवर्त्तन नहीं आया है। प्रकृति मनुष्य को जो देह, जो रूप, और जो क्षमताएं देकर संसार में भेजती है, उन्हीं को लिए हुए वह संसार में आ जाता है। उनमें से किसी चीज़ को इच्छानुसार चुन लेने की स्वतंत्रता न इंसान को पहले प्राप्त थी, न आज है, न आगे कभी प्राप्त होगी, हालांकि इंसानी ज़िंदगी का पूरा निर्माण इसी आधार पर होता है। इंसान को पहले भी इसका सामर्थ्य प्राप्त न था कि वह अपने जन्म के लिए परिवार, स्थान, समय, और हालात का अपनी इच्छानुसार चयन कर ले।

आज भी उसे यह सामर्थ्य प्राप्त नहीं है और वह आगे भी इस मामले में मात्र विवश ही रहेगा, हालाँकि ये सब मामले इंसान की ज़िंदगी और उसके भविष्य के बारे में निर्णायक पार्ट अदा करते हैं। जन्म के समय इंसान एक मांस का लोथड़ा होता है, जिसकी देख-रेख और लालन-पालन न किया जाए, तो उसको क्षमताओं का विकास तो बड़ी बात, उस का जीवित रहना भी कठिन है। इंसान की विवशता यथा-स्थिति बाक़ी है। इंसान मात्र अनस्तित्व वाला होता है, फिर वह दुर्बलता और विवशता की स्थिति में पैदा होता है, फिर युवावस्था को पहुंचकर बहुत-सी शक्तियों से मालामाल होता है, फिर वह बुढ़ापे का शिकार होता है और उसकी शक्तियां एक-एक करके जवाब देने लगती हैं, यहां तक कि मौत के भयावह जबड़े उसके अस्तित्त्व को चबा कर उसके जीवन का अन्त कर देते हैं। इंसान जिस प्रकार

इस मामले में पहले विवश था, आज भी विवश है और इस विवशता से छुटकारा पाने की कोई संभावना नहीं है।

'तुम किस प्रकार अल्लाह का इन्कार करते हो, हालाँकि तुम जीवन से वंचित थे तो अल्लाह ने तुम्हें जीवन प्रदान किया, फिर वह तुम्हें मौत देगा, फिर वह तुम्हें जीवित कर देगा, फिर तुम उसी के पास लौटाए जाओगे।' —सूरः बक़रः

'अल्लाह वह है, जिस ने तुम्हें कमज़ोरी से पैदा किया, फिर कमज़ोरी के बाद शक्ति प्रदान की, फिर शक्ति के बाद कमज़ोरी और बुढ़ापा पैदा किया।' —सूरः रूम

इंसान पहले भी हवा, गर्मी, पानी और भोजन का ज़रूरतमंद था और उनके बिना जीवित न रह सकता था और आज भी उसकी यह कमज़ोरी ज्यों की त्यों बाक़ी है। बीमारियां पहले भी इंसान को परेशान करती थीं और उसके जीवन के लिए ख़तरा बन जाती थीं और यही वस्तु-स्थिति अब भी चल रही है। बीमारियों पर क़ाबू पाने का जो शोर है, उसकी वास्तविकता केवल इतनी है कि कुछ पुराने रोग घटे हैं तो कुछ दूसरे नये और विकट रोगों ने जगह ले ली है और टी. बी. और कैंसर और हार्ट अटैक सरीखे घातक रोग आम होते जा रहे हैं। युद्ध-अस्त्र इंसान के लिए पहले भी विनाश-कारण थे और आज भी हैं, इस अन्तर के साथ कि प्राचीन हथियारों के साथ नये हथियारों की वृद्धि हो गयी है, जो पुराने हथियारों से अधिक ख़तरनाक हैं और इनमें से कोई कोई तो पूरी इन्सानी दुनिया को नष्ट कर देने के लिए पर्याप्त हैं, जैसे एटमबम और हाइड्रोजन बम और इंसान है कि अपने विनाश के इन भारी-भरकम अस्त्रों के आगे बिल्कुल विवश है। पहले इंसान पर जल, थल और वायु से मौत और विनाश की वर्षा होती थी, अब यह विनाश-वर्षा अन्तरिक्ष से भी हो सकेगी। दैवी विपदाओं का शिकार इंसान पहले भी हुआ करता था, पर अब द्रुतगामी सवारियों और वैज्ञानिक आविष्कारों ने दैवी

विपदाओं के साथ यांत्रिक विपदाओं में भयावह वृद्धि कर दी है। मानव-समस्याएं आज से पहले भी विकट थीं, पर आज वे असाध्य हो कर रह गयी हैं और कैसे भी सुलझने का नाम नहीं लेतीं। सार यह कि सामान्य व्यक्ति आज भी उतना ही विवश और मजबूर है, जितना पहले कभी था, बल्कि पहले से बहुत ज्यादा। रहे सत्तारूढ़ और धनी-मानी व्यक्ति तो वे पहले की तरह आज भी दूसरे इंसानों के मुहताज हैं। अगर यह सहारा समाप्त हो जाए तो बड़े से बड़ा इंसान भी सामान्य व्यक्तियों से अधिक कोई स्थान नहीं रखता और यह सहारा आए-दिन धोखा देता रहता है।

आशा और निर्भयता का रहस्य

यह एक अकाट्य सत्य है कि इंसान अपनी सर्वश्रेष्ठ क्षमताओं और सर्वोच्च प्रगतियों के बाद भी निःशक्ति और विवश है। अब या तो आप यह मानिए कि वह सृष्टि की अंधी-बहरी शक्तियों के हाथ में विवश खिलौना है, जो उसे न जाने कब तोड़-फोड़ कर रख दे और उसकी सारी योजनाओं को क्षण भर में धूल में मिला दे या आप यह मानिए कि इंसान उस सत्ता का शासित और उसके आगे पूर्णतः विवश है, जिसके नियमों में पूरी सृष्टि जकड़ी हुई है। इन दो बातों में से एक बात आपको स्वीकारनी होगी। अगर आप पहली बात स्वीकारते हैं, तो आप को एक प्रश्न का उत्तर देना होगा और वह यह है कि जिस प्रकार इंसान प्रकृति की अंधी-बहरी शक्तियों के आगे कमज़ोर और विवश दीख पड़ता है, उसी प्रकार स्वयं ये शक्तियाँ प्रकृति-नियमों के आगे विवश और मजबूर दीख पड़ती हैं, फिर वह कौन है, जिसके निर्धारित नियमों में तमाम शक्तियां जकड़ी हुई हैं ?

जिस सत्ता का क़ानून पूरी सृष्टि में चल रहा है, उसी के क़ानून का शासन इंसानी वजूद पर भी है लेकिन इस बात से हट कर कि जकड़न और नियमन का यह दृष्टिकोण इंसान को भय और निराशा के गहरे खड्ड में धकेल देने वाला है, तनिक विचार तो कीजिए, कोई एक शक्ति नहीं, अगणित शक्तियां हैं, जो इंसान के खा जाने के लिए हर ओर मुंह खोले खड़ी हैं। ये शक्तियां चेतना नहीं रखतीं कि इन से किसी दया या न्याय की आशा की जा सके या इन्हें राज़ी करके इनके प्रकोप से बचने का कोई उपाय अपनाया जा सके। इस दृष्टि-कोण का परिणाम इसके अतिरिक्त और क्या है कि मनुष्य अपने भविष्य से निराश हो जाए और उसका पूरा जीवन भय और आतंक की भेंट चढ़ जाए। ब्रिटेन का प्रसिद्ध अनीश्वरवादी दार्शनिक बर्ट्रेंड रसेल, सृष्टि के भौतिक स्पष्टीकरण को इन शब्दों में बयान करता है—

'इंसान अंधी-बहरी शक्तियों के हाथ में एक ऐसा विवश खिलौना है, जिसका कोई उद्देश्य नहीं। उसका जन्म और विकास, उस की आरज़ूएं और तमन्नाएं, उस के विश्वास और आस्थाएं व्यूहाणुओं के कार्य-कलाप का फल हैं। उसके जीवन का अन्त क़ब्र है और इसके बाद कोई अनुभूति और कोई दृष्टिकोण उसे जीवन प्रदान नहीं कर सकता। सदियों की जद्दोजेहद, उद्देश्य एवं लक्ष्य-प्राप्ति का लगाव, विभूतियों के कारनामे, सब सौर मंडल के साथ समाप्त होने वाली चीज़ें हैं। जब सृष्टि नष्ट प्राय होगी तो इंसानी चमत्कार भी उसके मलबे के नीचे दब कर रह जाएंगे।'

कितना भयानक और निराशामूलक है यह दृष्टिकोण, जिस किसी को यह दृष्टिकोण अपील करता हो, वह बे-झिझक इसे अपनाए। हमें तो जो बात तथ्यपरक लगती है, वह यह है कि इंसान सृष्टि की अंधी-बहरी शक्तियों के हाथ में विवश खिलौना होने के बजाए सृष्टि के शासक का शासित है, जो पूर्ण चेतना और गहन

तत्त्वदर्शिता के साथ सृष्टि की व्यवस्था चला रहा है। वह अपनी रचनाओं पर अति दयालु है, और जो बन्दे उसकी मर्ज़ी पर चलते हैं, उनके लिए उसकी कृपा और सहायता के द्वार खुल जाते हैं और सृष्टि की शक्तियां उनके साथ समरस हो जाती हैं। संसार में कोई शक्ति ऐसे व्यक्तियों का बाल भी टेढ़ा नहीं कर सकती। ख़ुदा परस्ती का यह दृष्टिकोण सही होने के साथ इंसान को भय, आतंक और निराशा से बचाने वाला और आशा और निर्भयता की राहें उस पर खोलने वाला है।

यह एक ऐतिहासिक और मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि भय और निराशा, व्यक्ति और राष्ट्र दोनों के लिए घातक विष समान हैं। इसके विपरीत निर्भयता और आशा, दो ऐसी रचनात्मक शक्तियां हैं, जो व्यक्तियों और राष्ट्रों को नव-जीवन प्रदान करतीं, उन्हें विकास-शिखर की ऊँचाइयों पर पहुंचातीं और उनके दुखों का इलाज सिद्ध होती हैं। इन दो शक्तियों का दामन अगर हाथ से न छूटे, तो परिस्थितियों के बहुत ज़्यादा बिगड़े होने के बावजूद यह आशा की जा सकती है कि परिस्थितियाँ बदली जा सकेंगी। इसके विपरीत अगर किसी क़ौम को भय या निराशा का घुन लग जाए, तो अधिक संख्या और साधनों का बाहुल्य भी उसे अपमान, अनादर, गिरावट और नीचता से नहीं बचा सकता।

इस निर्मम भौतिक जगत में जहां सृष्टि की अंधी-बहरी शक्तियां मुंह फैलाए हुए इंसान को खाने के लिए हर तरफ़ मौजूद हैं और जहां सत्ताधारियों और धनवानों के हाथों हर ओर बिगाड़ और अन्याय का बाज़ार गर्म है, ख़ुदा की जीवनदायी धारणा के अतिरिक्त कमज़ोरों के लिए भय और निराशा से बचने की कोई राह नहीं, यही वह विश्वास है जो बे-सहारा लोगों के लिए सहारा बनता है, जो साधनों के अभाव के बावजूद इंसान को भय और निराशा का शिकार नहीं होने देता और मकज़ोरों की कमज़ोरी का इलाज सिद्ध होताहै—

लादीनी व लातीनी, किस पेच में उलझा तू,
दारू है ज़ईफ़ों का ला ग़ालि-ब इल्लाहू ।[1] —इक़बा

ईश्वरवादियों का विश्वास होता है कि हानि-लाभ और जीवन मृत्यु न इंसान के अपने हाथ में है, न दूसरे इंसानों के वश में, सृष्टि की अंधी-बहरी शक्तियों के वश में, बल्कि सब कुछ केवल ख़ुदा के हाथ में है, इसलिए न प्रभुत्वशालियों और धनवानों से डरने की ज़रूरत है, न सृष्टि की शक्तियों से, सारी शक्ति अल्लाह के हाथ में है और वह अकेले तमाम शक्तियों से निबटने के लिए काफ़ी है।

'शक्ति सारी की सारी अल्लाह ही के लिए है।'[2] 'वही है जो जीवन प्रदान करता और मौत देता है।'[3] 'ये वह लोग हैं कि जब इनसे लोगो ने कहा कि लोगो (शत्रुओं) ने तुम्हारे (मुक़ाबले) के लिए (बहुत सामग्री) इकट्ठा की है, तो तुम उनसे डरो, तो इससे उनका ईमान और बढ़ गया और उन्होंने कहा, अल्लाह हमारे लिए काफ़ी है और वह बेहतरीन कारसाज़ है।' —आले इम्रान

ऐसे परिस्थितियां यदि अनुकूल हों तो निराशा का कोई कारण नहीं, निर्णायक वस्तु परिस्थितियां नहीं, अल्लाह है, वह एक क्षण में हालात को बदल सकता और बदलता रहता है, वही है जो व्यक्तियों और राष्ट्रों को प्रभुत्व और आदर प्रदान करता और वही उनसे प्रभुत्व और आदर छीन लेता है।

'कहो, ऐ अल्लाह ! सत्ता के स्वामी ! तू जिसे चाहता है, सत्ता प्रदान करता है और जिससे चाहता है, सत्ता छीन लेता है। जिसे चाहता है, सम्मान देता है और जिसे चाहता है, अपमानित कर देता

---

१. अनीश्वरवाद और लातीनी, किन गुत्थियों में तू उलझा हुआ है, इस लिए कमजोरों का इलाज 'उस ख़ुदा के अलावा कोई प्रभुत्व वाला नहीं' ही है, २. सूरः बक़र, ३. सूरः मुअ्मिनून,

है, तेरे ही हाथ में सारी दौलत व नेमत है, निश्चय ही तू हर वस्तु पर समर्थ है।'
—आले इम्रान

अगर हम अल्लाह की मर्ज़ी पर चल रहे और उसकी अवज्ञा से बचने की व्यवस्था कर रहे हैं, तो प्रतिकूल परिस्थितियों से प्रभावित होने का कोई कारण नहीं। जब अल्लाह हमारा सहारा है, तो किसी चीज़ से डरने का क्या प्रश्न ?

'और जो अल्लाह की अवज्ञा से बचेगा, अल्लाह उसके लिए राह पैदा कर देगा और उसे ऐसे स्थान से रोज़ी देगा, जिसका उसे गुमान तक न होगा, और जो अल्लाह पर भरोसा करेगा, अल्लाह उसके लिए काफ़ी होगा। निश्चय ही अल्लाह अपने निर्णय को लागू करके रहता है, (अल-बत्ता) उसने हर चीज़ के लिए एक अन्दाज़ा (योजना) मुक़र्रर कर रखा है।'
—सूर : तलाक़

अल्लाह पर विश्वास और निराशा, दोनों एक दिल में जमा नहीं हो सकते, जहां अल्लाह पर यक़ीन होगा, वहां निराशा न होगी, जहां निराशा होगी, वहां खुदा पर यक़ीन न होगा।

'अल्लाह की रहमत से निराश न हो। निश्चय ही खुदा की रहमत से सिर्फ़ काफ़िर और इंकारी निराश होते हैं।'
—सूर : यूसुफ़

खुदा का इन्कार करते ही यह महान शक्ति हमसे छिन जाती है, यही कारण है कि खुदा के इंकारी जब भौतिक साधनों से महरूम हो जाते हैं, तो संसार उनके लिए अंधेरा हो जाता है और वे आत्म-हत्या करके अपने कष्ट भरे जीवन का अन्त कर लेते हैं या अन्याय और उद्दंडता के आगे घुटने टेक देते हैं, जैसा कि कम्युनिज़म के वर्तमान नेता—ख्रुश्चेव—और उनके साथियों ने स्वयं उनके अपने स्वीकारने के अनुसार कम्युनिज़म के भूतपूर्व नेता स्टालिन—के अन्याय तथा उद्दंडता के आगे घुटने टेक दिए थे।

ईश्वरवाद और अनीश्वरवाद दो प्रतिकूल दृष्टिकोण हैं और मानव-जीवन पर उनके गहरे प्रभाव पड़ते हैं, उनमें से कौन-सा

दृष्टिकोण सही है, इसे तै करने का एक तरीक़ा यह है कि दोनों दृष्टि-कोणों के तर्कों पर विचार किया जाए और दूसरा तरीक़ा यह है कि जीवन पर उनके प्रभावों का जायज़ा लिया जाए। इस पहलू से जब आप देखेंगे तो आपको मालूम होगा कि दोनों दृष्टिकोण जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं।

ख़ुदा का इंकारी धन और सत्ता पा कर अन्याय और पैशाचिकता की प्रतिमूर्ति बन जाता है, क्योंकि उसे अपने से किसी उच्चतर सत्ता के आगे जवाबदेही का भय नहीं होता। इसके विपरीत ख़ुदा के हुज़ूर जवाबदेही का भय ख़ुदापरस्त (ईश्वरवादी) को अन्यायी और निष्ठुर बनने से रोके रखता है। इसी तरह ख़ुदा का इंकारी भौतिक सहारों के अभाव में भय, आतंक और निराशा का शिकार हो जाता है, क्योंकि तमाम भौतिक सहारे उससे छिन चुके होते हैं और इन सहारों से हट कर किसी सहारे का वह क़ायल नहीं होता। इसके विपरीत निःसहाय होने की स्थिति में भी ख़ुदा का सहारा ख़ुदापरस्त को भय और निराशा का शिकार होने नहीं देता—यह हानि-लाभ का खुला हुआ माप है और इसे सामने रख कर हम आसानी से यह तै कर सकते हैं कि कौन-सा दृष्टिकोण सत्य और मानवता के लिए कल्याणप्रद है और कौन-सा दृष्टिकोण असत्य और मानवता के लिए घातक।

अनीश्वरवाद या प्रत्यक्ष प्रकृति का आतंक ?

अनीश्वरवादियों का विचार है कि धर्म प्रत्यक्ष प्रकृति से आतंकित होने के परिणामस्वरूप पैदा हुआ। मनुष्य ने हवा, पानी, आग, ज़मीन, पहाड़ और ऐसी दूसरी पृथ्वी की रचनाओं को स-शक्त और ख़तरनाक महसूस किया, उसे ख़्याल हुआ कि ये प्रकृति से परे की

शक्ति की पोषक हैं, चुनांचे उसने उन्हें देवता मान लिया, वह सूर्य-चन्द्र की महानता से भी प्रभावित हुआ,और बे-झिझक इन 'देवताओं' के आगे भी झुक गया। उसने अपने सिर पर तारों को जगमग-जगमग करते देखा। उसे विचार हुआ कि वे मेरे भाग्य के मालिक हैं और वह उनके पूजन में लग गया। उसने कुछ व्यक्तियों को धन-सत्ता या आध्यात्मिकता और आचरण में अपने से उच्चतर पाया और वह बे-झिझक उनके आगे झुक गया। इस तरह ख़ुदाओं की एक लम्बी सूची तैयार हो गयी, जो परिस्थितियों के अन्तर्गत घटती-बढ़ती रही, यहां तक कि परिस्थितियों के विकास ही के फलस्वरूप यह सूची घटते-घटते केवल एक ख़ुदा पर सम्मिलित रह गयी और अब जबकि प्रकृति की प्रत्यक्ष वस्तुओं से आतंकित होने का दौर ख़त्म हो चुका है और मनुष्य सृष्टि-व्यवस्था को अच्छी तरह समझ चुका है, एक ख़ुदा को भी मानने की ज़रूरत नहीं रही है।

यह बात निश्चित रूप से सही है कि प्रकृति के प्रत्यक्ष स्वरूप का रौब खाने ही के नतीजे में प्रत्यक्षवाद पैदा हुआ। इंसान ने बिना किसी बौद्धिक प्रमाण के, मात्र आतंकित हो, यह कल्पना कर ली कि प्रकृति के प्रत्यक्ष स्वरूप में परा प्राकृतिक और 'ख़ुदाई शक्ति' मौजूद है, हालांकि ये शक्तियां स्वयं प्राकृतिक नियमों में जकड़ी हुई हैं और अपनी मूक भाषा में कह रही हैं कि वे शासक नहीं, शासित हैं, ख़ुदा नहीं, ख़ुदा के आदेशाधीन हैं।

पर यह बात किसी प्रकार सही नहीं कि प्रकृति के प्रत्यक्ष स्वरूप से आतंकित होने ही के नतीजे में एक ख़ुदा की कल्पना जन्म लेती है। तौहीद (एकेश्वरवाद) का भव्य भवन प्रत्यक्ष स्वरूप के आतंक पर नहीं, उसके निषेध पर खड़ा होता है। तौहीद का अर्थ इस के सिवा और क्या है कि इंसान हो, जिन्न हो, फ़रिश्ता हो या और कोई धरती या आकाश का जीव, किसी के पास कोई शक्ति नहीं।

जीवन-मृत्यु, हानि-लाभ, भाग्य और आजीविका, हर चीज़ मात्र अल्लाह के हाथ में है। पूरी सृष्टि रचित, शासित, विवश और मुहताज है। रचयिता, स्वामी, शासक, उपास्य और आधिकारिक सत्ता तो केवल अल्लाह है। शिर्क ख़ुदा के अतिरिक्त की शक्तियों का स्वीकरण है और तौहीद उसके अलावा की शक्तियों का पूर्ण इंकार, फिर भी अनीश्वरवादियों को आग्रह है कि तौहीद प्रकृति के प्रत्यक्ष स्वरूप से आतंकित होने का फल है—

ख़िरद का नाम जुनूँ रख दिया जुनूं का ख़िरद,
जो चाहे आप का हुस्ने करिश्मा साज़ करे।[1]

ऐसे ही यह बात सही नहीं है कि प्रत्यक्षवाद और शिर्क (बहु-देववाद) ने 'विकास' करके तौहीद (एकेश्वरवाद) का रूप धारण कर लिया। डार्विन का 'उद्विकास सिद्धांत' अभी तक प्रमाण चाहता है। यह एक सच्चाई है कि इस में भारी-भारी 'अभाव' हैं, जिन्हें अब तक पूरा नहीं किया जा सका है, पर यह सिद्धांत यदि सही सिद्ध भी हो जाए तो इसका सम्बन्ध भौतिकी से है, न कि इंसान के वैकल्पिक जीवन और उसके विचारों और सिद्धांतों से। यह ज्ञान-विज्ञान के प्रति बड़ा अन्याय होगा कि भौतिकी के एक सिद्धांत को किसी प्रमाण के बिना इंसान के चिन्तनात्मक तथा नैतिक जगत पर ज़बरदस्ती चेप दिया जाए। सच तो यह है कि इस बात का कोई वैज्ञानिक प्रमाण मौजूद नहीं है कि इंसान के चिन्तनात्मक तथा नैतिक जीवन में भी इसी प्रकार विकास हुआ है, जिस प्रकार डार्विन के दृष्टिकोण के अनुसार भौतिक जगत में हुआ है। इसके विपरीत इतिहास इस बात का प्रमाण जुटाता है कि जो बुराइयां हज़ारों वर्ष पहले मौजूद

---

१. अर्थात बौद्धिकता का नाम भावना और भावना को बौद्धिकता कह दिया। यह तो आप का चमत्कारिक सौन्दर्य ही कर सकता है।

थीं, वे आज भी मौजूद हैं और जो भलाइयां आज पायी जाती हैं, उन का अस्तित्त्व हज़ारों वर्ष पहले भी था। ऐसे ही शिर्क आज से हज़ारों वर्ष पहले भी पाया जाता था और आज भी संसार की बहुत बड़ी आबादी शिर्क में डूबी हुई है। बाइबिल और क़ुरआन के बयान को न माना जाए, तब भी इतिहास से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि तौहीद के मानने वाले कम से कम चार-पांच हज़ार साल पहले मौजूद थे और आज भी दुनिया के बहुत-से लोग तौहीद को स्वीकारते हैं। अनीश्वरवाद को चिन्तनात्मक विकास की अन्तिम कड़ी और वर्तमान युग की उपज समझा जाता है और इसमें सन्देह नहीं कि इस का चलन वर्तमान युग ही में हुआ है, पर अब से हज़ारों वर्ष पहले यह दृष्टिकोण यूनान और भारत में मौजूद था और भारत में तो शिर्क के कांधे से काँधा मिला कर अनीश्वरवाद का दावा करने वाले मौजूद थे, जिन की कोशिशों से अनीश्वरवाद की एक विचार-धारा और एक अनीश्वरवादी सम्प्रदाय ने जन्म ले लिया था। बहरहाल मानव-इतिहास निश्चित रूप से इस बात का खंडन करता है कि अनेकेश्वरवाद ने विकसित रूप ले कर एकेश्वरवाद का और एकेश्वरवाद ने विकसित हो कर अनीश्वरवाद का रूप अपना लिया है।

अनीश्वरवादियों का विचार है कि प्रकृति के प्रत्यक्ष स्वरूप के आतंक का युग समाप्त हो गया, इसलिए ख़ुदापरस्ती (ईश्वरवाद) को भी विदा हो जाना चाहिए और उसका स्थान अनीश्वरवाद को ले लेना चाहिए, पर शायद वे इस सच्चाई को भूल जाते हैं कि अनेकेश्वरवाद और अनीश्वरवाद, ये दोनों दृष्टिकोण प्रकृति के प्रत्यक्ष स्वरूपों के आतंक की उपज हैं, जब कि एकेश्वरवाद की धारणा ही वह एकमात्र धारणा है जो भौतिक शक्तियों के आतंक का पूर्णतः अन्त कर देता है। ज्ञान-विज्ञान और पश्चिम के इतिहास से भिज्ञ लोग जानते हैं कि इस्लाम की एकेश्वरवादी धारणा और मुसलमानों

के ज्ञानात्मक तथा वैज्ञानिक विकास ही के कारण यूरोप ज्ञान-विज्ञान की वर्तमान पराकाष्ठा तक पहुंचा है और अगर इस प्रत्यक्षवाद तथा अन्ध-विश्वास की बेड़ियां काटने में देर लगी है, तो इसके ज़िम्मेदार ईसाई धर्म के वे ग़लत मार्गदर्शक हैं, जिन्होंने हज़रत ईसा अलै० के एकेश्वरवादी आह्वान में अनेकेश्वरवादी धर्म मिला दिया और ज्ञान-विज्ञान के विकास-मार्ग में लौह-दीवार बन कर खड़े हो गये।

एकेश्वरवाद और प्रत्यक्षवाद एक दूसरे के विलोम हैं। एकेश्वरवाद प्रत्यक्षवाद के आतंक को मन व मस्तिष्क के एक-एक कोने से निकाल फेंकता है, इसलिए अगर प्रत्यक्षवाद का आतंक समाप्त हो रहा है, तो इस में एकेश्वरवाद के लिए मौत का पैग़ाम नहीं, यह एकेश्वरवाद की सफलता मात्र है। ऐसे वातावरण और ऐसे युग में एकेश्वरवाद की धारणा बहुत तेज़ी से फैल सकेगी। यह एक वास्तविकता है कि ज्ञान-विज्ञान के विकास में अनेकेश्वरवाद और अनीश्वरवाद दोनों की मृत्यु का सन्देश है और तौहीद (एकेश्वरवाद) और सच्ची ख़ुदापरस्ती (ईश्वरवाद) के लिए जीवन-दान और सफलता की शुभ-सूचना।

यह बात देखने में विचित्र-सी लगती है कि अनेकेश्वरवाद की भांति अनीश्वरवाद भी प्रत्यक्षवाद के आतंक का परिणाम है, पर क्या किया जाए, सच्चाई यही है और विचार करने पर आप भी इसे मानने पर विवश होंगे। अनेकेश्वरवादी भौतिक शक्तियों का रौब खा कर उन्हें ख़ुदा की ख़ुदाई में भागीदार बना लेता है, जबकि अनीश्वरवादी भूत-द्रव्य और भौतिक शक्तियों ही को पहला और आख़िरी सब कुछ समझ लेता और भूत-द्रव्य को ख़ुदाई स्थान देकर ख़ुदा का इंकार कर देता है। अनीश्वरवादी की दृष्टि भूत-द्रव्य और उसके प्रत्यक्ष स्वरूप में फंस कर रह जाती है और वह भूत-द्रव्य की

नूतनताओं में इस तरह गुम हो जाता है कि बिल्कुल सामने की सच्चाइयां उस की नज़रों से ओझल हो जाती हैं। वह यह नहीं सोच पाता कि जब भूत-द्रव्य और सृष्टि शाश्वत तथा प्राचीन नहीं हैं, तो उन्हें किसी सत्ता ने अवश्य ही जन्म दिया होगा। जब सृष्टि में सुदृढ़ व्यवस्था स्थापित है, तो निश्चय ही कोई सत्ता सृष्टि की व्यवस्थापक होगी। जब इस ऐहिक जगत में अपूर्व तत्त्वदर्शिता और अनुपम नियोजन है, तो निश्चय ही उसके पीछे किसी तत्त्वदर्शी और योजनाकार सत्ता की तत्त्वदर्शिता तथा नियोजन कार्यरत होगा और जब सृष्टि की हर-हर वस्तु भौतिक नियमों में जकड़ी हुई है तो निश्चित रूप से एक नियामक तथा शासक होगा, जिसने नियम बना कर पूरी शक्ति के साथ उसे लागू किया होगा, लेकिन इन बोलती सच्चाइयों तक पहुचना उसी समय संभव है, जब भौतिक जगत की नूतनताओं से आंखें चका चौंध न हो जाएं। लेकिन होता यही है कि अनेकेश्वरवादी तथा अनीश्वरवादी, दोनों प्रकृति के प्रत्यक्ष स्वरूपों का रौब खा जाते हैं और उन्हें यह अवसर नहीं मिलता कि इस भौतिक प्रपंच से निकल कर उस सत्ता की सही अनुभूति कर सकें, जिसकी रचना-शक्ति, जिसकी पालन-शक्ति और जिसके सामर्थ्य तथा तत्त्वदर्शिता के बाह्य स्वरूप सृष्टि में हर ओर फैले हुए हैं। अन्तर केवल इतना है कि अनेकेश्वरवादी ख़ुदा का इंकार नहीं करता, बल्कि ख़ुदा को स्वीकारते हुए बहुत से ख़ुदाओं को उस की ख़ुदाई में शरीक कर लेता है, जबकि अनीश्वरवादी भूत-द्रव्य के प्रत्यक्ष स्वरूपों और उनकी नूतनताओं में गुम होकर ख़ुदा ही का इंकार कर देता और भूत-द्रव्य को ख़ुदाई के श्रेष्ठ स्थान पर बिठा देता है। कितनी बड़ी त्रासदी है यह कि इंसान सृष्टि व्यवस्था से परिचित होने के बाद भी प्रकृति के प्रत्यक्ष स्वरूपों के आतंक के जाल से निकल न सका, बल्कि इस 'मोहक प्रपंच' में पहले से अधिक फंस कर रह गया। आह ! इंसान की अनभिज्ञता और उसका थोथा ज्ञान !

क्या खुदा के लिए रचयिता चाहिए ?

कहा जाता है कि ब्रिटेन के प्रसिद्ध दार्शनिक बर्ट्रेन्डरसेल के सामने यह प्रश्न आया कि 'ख़ुदा सृष्टि का रचयिता है तो ख़ुदा का रचयिता कौन है ?' वह इस प्रश्न का उत्तर न पा सका। अतएव उसने ख़ुदा को मानने से इन्कार कर दिया। पर यह सन्देह न तो नया है और न 'बर्ट्रेन्ड रसेल' तक सीमित है। अब से कम से कम चौदह सौ वर्ष पहले यह सन्देह लोगों के मन में बैठा हुआ था। अतएव अल्लाह के आख़िरी नबी हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसका उल्लेख करके इसे 'शैतानी भ्रम' की हैसियत दी है और वह तरीक़ा बताया है, जिस से ईमान वाले इस भ्रम से निकल सकें।

ऐसा लगता है कि आज के अनीश्वरवादी सामान्य रूप से इस भ्रम में पड़े हुए हैं या कम से कम वे इस प्रश्न को असाधारण महत्त्व देते हैं, क्योंकि जब भी किसी अनीश्वरवादी से वार्त्ता होती है और वह ख़ुदा को मानने पर विवश होने लगता है, तो अन्त में वह इस प्रश्न को इस प्रकार सामने लाकर रख देता है, मानो ख़ुदा के न होने का यह कोई निश्चित तर्क हो।

यह प्रश्न देखने में पेचदार तथा न हल होने योग्य दीख पड़ता है, पर जब आप इस पर विचार करने बैठेंगे, तो आप को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि यह एक लचर और निरर्थक बात है, जिसकी हैसियत वास्तव में शैतानी प्रपंच से अधिक नहीं है।

वास्तव में उस मनोवृत्ति में सुधार होना चाहिए, जिस ने इस प्रश्न का सहारा लेकर ख़ुदा को मानने से इंकार कर दिया, क्योंकि इस प्रश्न का ख़ुदा के होने, न होने से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है।

मूल समस्या यह है कि सृष्टि के चिह्नों से सृष्टि के स्रष्टा, व्यवस्थापक और शासक का पता लगता है या नहीं ? अगर नहीं, तो इस प्रश्न का सहारा लेने की कदापि आवश्यकता नहीं है। इस सहारे के बिना भी ख़ुदा को स्वीकार न किया जाएगा, पर सृष्टि के चिह्न यदि खुले आम किसी स्रष्टा तथा शासक का पता देते हैं और ख़ुदा के बिना न सृष्टि का स्पष्टीकरण हो पाता है, और न इंसानी समस्याएं हल होती हैं, तो ख़ुदा को मानने से मात्र इस कारण इंकार न किया जाएगा कि उसकी ज़ात से सम्बन्धित एक प्रश्न हल नहीं हो रहा। ज्ञान-जगत में ऐसा कभी नहीं होता कि तमाम संबंधित प्रश्न हल हो जाएं, न ऐसा सम्भव है, अधिकांश प्रश्न हल हो जाएं इसी को सफलता समझा जाता है। विज्ञान के निकाले परिणामों को अन्तिम समझ कर बिना किसी अनुनचि के स्वीकार कर लिया जाता है, पर—जैसा कि एक पश्चिमी वैज्ञानिक ने बर्ट्रेंड रसेल के इस सन्देह का उल्लेख करते हुए कहा है—विज्ञान की लगभग तमाम मान्यताओं का यही हाल है। उनके बारे में बहुत-से ऐसे प्रश्न पैदा होते हैं, जिनका किसी के पास कोई उत्तर नहीं है। पर इन प्रश्नों के कारण न इन मान्यताओं का इंकार किया जा सकता है और न इंकार करके विज्ञान-क्षेत्र में एक क़दम आगे बढ़ सकते हैं। फिर इसका औचित्य क्या है कि केवल एक प्रश्न का उत्तर न पाने के कारण—इस शर्त के साथ कि उसका वास्तव में कोई उत्तर न हो—उस महान तथ्य का इंकार कर दिया जाए, जिसकी गवाही धरती और आकाश की हर-हर वस्तु दे रही है, शायद मनोवृत्ति के इसी दोष को अल्लाह के रसूल सल्ल० ने शैतानी प्रपंच कहा है।

पर क्या सच में यह कोई हल न होने वाला प्रश्न है ? प्रश्न का विश्लेषण कीजिए तो आप को मालूम होगा कि इसकी हैसियत भ्रम

अथवा भ्रान्ति से अधिक नहीं है। प्रश्न यह है कि अगर ख़ुदा सृष्टि का स्रष्टा है तो ख़ुदा का रचयिता कौन है ? भ्रम पैदा करने का पहलू यह है कि ख़ुदा और सृष्टि को प्रश्न में एक ही स्तर पर रख दिया गया है, मानो पहले से यह कल्पना कर ली गयी है कि ख़ुदा और सृष्टि एक ही श्रेणी की वस्तुएं हैं और सृष्टि के लिए जिन बातों की आवश्यकता है, ख़ुदा को भी उन्हीं बातों की ज़रूरत है, यहां तक कि सृष्टि के लिए कोई रचयिता मानना अनिवार्य हो तो यह भी अनिवार्य है कि ख़ुदा का कोई रचयिता माना जाए।

पर यह बात उसी समय सही होगी, जब यह मालूम हो जाए कि ख़ुदा और सृष्टि दोनों की श्रेणी तथा परिस्थितियां एक जैसी हैं। पर उसकी एकरूपता के लिए किसी के पास कोई प्रमाण नहीं है, यही नहीं, कोई सुशील तथा गंभीर स्वभाव का व्यक्ति, होश व हवास के साथ इस बात को स्वीकार नहीं कर सकता कि ख़ुदा और सृष्टि, दूसरे शब्दों में, रचना और रचयिता, श्रेणी और परिस्थितियों की दृष्टि से समान हो सकते हैं। सच में यह प्रश्न ऐसा ही है जैसे कोई व्यक्ति यह पूछ बैठे कि हम और पृथ्वी की तमाम दूसरी चीज़ें पृथ्वी पर ठहरी हुई हैं, तो पृथ्वी किस चीज़ पर ठहरी हुई है ? यह प्रश्न इसी लिए तो ग़लत है कि प्रश्न कर्त्ता ने पृथ्वी को और उन चीज़ों को जो पृथ्वी पर ठहरी हुई हैं, समान हैसियत दे दी, उसने विचार किया कि जिस तरह हम ठहरे हुए हैं और हमें ठहरने के लिए पृथ्वी के सहारे की ज़रूरत है, इसी प्रकार पृथ्वी भी ठहरी हुई होगी और उसे भी सहारे की ज़रूरत होगी, पर यह विचार इसलिए सही नहीं है कि पृथ्वी की और उन चीज़ों की जो पृथ्वी पर ठहरी हुई हैं, समान दशा नहीं है, हालांकि पृथ्वी पर पायी जाने वाली तमाम चीज़ें ज़मीनी भूत-द्रव्य ही से बनी हैं और उनका पृथ्वी से गहरा सम्बन्ध

है। इस गहरे सम्बन्ध के होते हुए भी पृथ्वी और उनके मध्य बड़ा अन्तर है, तो रचयिता और रचना के मध्य कितना महान अन्तर होगा और दोनों को समान हैसियत देकर सोचना और प्रश्न करना कितना ग़लत होगा।

जो लोग यह प्रश्न करते हैं, शायद उन्होंने सृष्टि, ख़ुदा और रचना-कार्य किसी पर गंभीरतापूर्वक विचार नहीं किया, वरना वे इस प्रकार की व्यर्थ की वात न कहते। रचना का अर्थ इस के सिवा और क्या है कि एक वस्तु को, जो पहले मौजूद न थी, अस्तित्त्व प्रदान किया गया। जो व्यक्ति कहता है कि 'ख़ुदा सृष्टि का रचयिता है' दूसरे शब्दों में वह इस वात को स्वीकारता है कि सृष्टि पहले मौजूद न थी, फिर ख़ुदा ने उसे पैदा किया। अगर कोई व्यक्ति समझता है कि सृष्टि रचना नहीं, शाश्वत और प्राचीन है, तो उसके दृष्टिकोण का अनिवार्य तक़ाज़ा यह है कि सृष्टि का कोई रचयिता न हो, पर इस दृष्टिकोण के पोषक को यह प्रश्न करने का अधिकार नहीं है कि ख़ुदा 'सृष्टि का रचयिता है, तो ख़ुदा का रचयिता कौन है ?' यह प्रश्न उसी समय किया जा सकता है, जब आप किसी न किसी स्तर पर इसे मान लें कि सृष्टि का कोई न कोई रचयिता हो सकता है अर्थात आप मान लें कि सृष्टि पहले मौजूद न थी, फिर अस्तित्त्व में आ गयी, पर अगर आप सृष्टि को प्राचीन और शाश्वत मानते हैं तो इस प्रकार का प्रश्न करने के बजाए आप सीधे-सीधे यह कहिए कि सृष्टि प्राचीन तथा शाश्वत है, इसलिए उसके लिए किसी रचयिता का प्रश्न ही नहीं उठता।

इसी तरह सृष्टि किसी एक वस्तु का नाम नहीं है। हर वस्तु जो मौजूद थी, मौजूद है और मौजूद होगी और वह रचना है, सृष्टि है। सृष्टि केवल पृथ्वी और उसकी रचित वस्तुओं का नाम नहीं है, वह मात्र सौर-मंडल पर भी आधारित नहीं है। जो तारे हमें नंगी आंख

और बड़े से बड़े दूरदर्शक यंत्रों द्वारा दीख पड़ रहे हैं, इन सब के योग का नाम भी सृष्टि नहीं है। जो सौर-मंडल और नभ-मंडल अन्तरिक्ष में मौजूद हैं (और एक नभ-मंडल में बहुत से सौर मंडल होते हैं) वे अपनी पिछली, वर्तमान और आने वाली रचित वस्तुओं सहित सृष्टि का मात्र एक अंश है। सृष्टि में वे तमाम तारे भी दाख़िल है, जो अभी तक गठनाधीन हैं और उनकी वे व्यवस्थाएं भी, जो उनके गठन होने के बाद अस्तित्त्व में आएंगी, साथ ही वे तारे भी जो आगे कभी रचे जाएंगे। ऐसे ही अन्तरिक्ष में जो लहरें, जो किरणें और जो शक्तियां मौजूद हैं, वे सभी सृष्टि में दाखिल हैं। सार यह कि सृष्टि नाम है पिछली, आज की और आगे की तमाम रचित वस्तुओं के योग का, जिस से कोई रचना बाहर नहीं है। 'ख़ुदा सृष्टि का स्रष्टा है,' इस का खुला हुआ अर्थ यह है कि ख़ुदा उस हस्ती का नाम है जो सारी सृष्टि—पिछली, आज की और आगे की तमाम रचनाओं—का रचयिता है। सृष्टि मौजूद न थी और वह मौजूद था, फिर उस ने अपने सामर्थ्य से तमाम रचनाओं को पैदा किया। दूसरे शब्दों में ख़ुदा सृष्टि से पहले है, ख़ुदा सृष्टि से परे है, ख़ुदा सृष्टि का अंश नहीं है, वह तमाम रचनाओं से परे है, वह रचना नहीं है, वह रचयिता है।

इस व्याख्या के बाद तनिक इस वाक्य के तात्पर्य का विचार कीजिए कि ख़ुदा सृष्टि का रचयिता है तो ख़ुदा का रचयिता कौन है? कितना सुन्दर और अर्थपूर्ण प्रश्न है यह! सृष्टि तो न प्राचीन है, न शाश्वत, इसलिए उसका रचयिता होना अनिवार्य है, पर ख़ुदा के लिए यह प्रश्न क्यों पैदा हो गया कि इसका रचयिता कौन है? क्या ख़ुदा प्राचीन और शाश्वत नहीं है? क्या वह पहले मौजूद न था और बाद में किसी के पैदा करने से पैदा हुआ? अगर ऐसा है, तो निश्चय ही वह ख़ुदा नहीं है, वह रचना है और सृष्टि—रचनाओं

का योग—का एक अंश, हालाँकि प्रश्न सृष्टि या उसके किसी अंश के बारे में नहीं, खुदा के बारे म था, जो सृष्टि का अंश नहीं, सृष्टि का पैदा करने वाला है।

अगर खुदा सृष्टि से परे है और रचनाओं के क्षेत्र में शामिल नहीं है, तो उसके लिए रचयिता की धारणा आखिर कहां से पैदा हो गयी, रचयिता रचनाओं के लिए होता है, रचयिता के लिए नहीं। जो रचना नहीं, रचयिता है, जो अनस्तित्त्व से अस्तित्त्व म नहीं आया, बल्कि सदा से मौजूद है, उसके बारे में यह सवाल करना कि उसका पैदा करने वाला कौन है, अति मूर्खता की बात है।

इस प्रश्न का अर्थ तो यह हुआ कि खुदा जो रचना नहीं है, और जो कभी पैदा नहीं हुआ, बल्कि हमेशा से है, उसे पैदा करने वाला और अनस्तित्त्व से अस्तित्त्व में लाने वाला कौन है ? क्या यह प्रश्न प्रतिकूलताओं का योग नहीं है ? क्या आप इसे व्यर्थ के सिवा और किसी शब्द से याद कर सकते हैं ? आप मानते हैं कि खुदा सृष्टि—तमाम, पिछली, आज की और आगे की रचनाओं—से परे है अर्थात यह रचना नहीं है और कभी पैदा नहीं हुआ, पर उसी क्षण आप गंभी-रतापूर्वक यह प्रश्न जड़ देते हैं कि खुदा को किस ने पैदा किया ? और जब कोई व्यक्ति व्यर्थ की बात समझ कर प्रश्न को नज़रंदाज़ कर देता है, तो आप पुकार उठते हैं कि देखो, खुदापरस्तों (ईश-वादियों) के पास इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं है और आप इत्मी-नान के साथ खुदा का इन्कार कर देते हैं। यह दर्शन की आखिर कौन सी क़िस्म है ? क्या अनीश्वरवादी दर्शन की इमारत इसी प्रकार की शानदार बुनियादों पर उठी है ?—

बरीं अक़्ल व दानिश बबायद गिरीस्त।

(इस बुद्धि और विवेक पर तो रोना ही चाहिए)

अगर कोई व्यक्ति यह कहता है कि मैं सृष्टि के रचयिता को प्राचीन और शाश्वत नहीं स्वीकार करता, जिस तरह सृष्टि रचना है और

ख़ुदा उसका रचयिता है उसी तरह, हो सकता है कि सृष्टि का रचयिता भी रचना हो, तो उसका पैदा करने वाला और रचयिता कौन है ?

उपरोक्त व्याख्या को नज़रंदाज़ करते हुए, किसी वाद-विवाद के बिना अगर यह बात ज्यों की त्यों मान ली जाए, तब भी हम किसी न हल होने वाली समस्या से दो-चार नहीं होते। दोराहों में से एक राह आप को बहरहाल अख़्तियार करना पड़ेगी। सृष्टि के रचयिता को प्राचीन और शाश्वत मानिए, इस स्थिति में इस के लिए किसी रचयिता का प्रश्न ही नहीं उठता या उसे प्राचीन और शाश्वत न मानिए और रचना मान लीजिए। इस दशा में स्वयं आपके अपने दृष्टिकोण से निश्चय ही उसका भी कोई रचयिता होगा। यह एक अनिवार्य-सी बात है कि कोई चीज़ स्वत: अनस्तित्त्व से अस्तित्त्व में नहीं आ सकती, जब तक कि उसे अस्तित्त्व में लाने वाली हस्ती मौजूद न हो। इस 'रचयिता' का आप जो नाम चाहें, मान लें, बहर-हाल आपको स्वयं अपने दृष्टिकोण के अनुसार उसे मानना होगा और यह आपकी ज़िम्मेदारी होगी कि आप बताएं कि वह कौन है ? और उसके गुण क्या हैं ?

फिर सृष्टि के रचयिता के उस 'कल्पित रचयिता' के बारे में प्रश्न पैदा होगा कि वह प्राचीन और शाश्वत है या रचना ? अगर आप उसे प्राचीन और शाश्वत मानते हैं तो फिर यह प्रश्न पैदा न होगा कि उसका रचयिता कौन है ? वरना उसके लिए भी कोई न कोई रचयिता आप को मानना ही पड़ेगा। बहरहाल इस प्रकार के कल्पित 'रचयिताओं' का, जिन में से हर एक रचयिता भी हो और रचना भी, चाहे आप कितना लम्बा सिलसिला क्यों न मान लें, अन्त में आप को एक सत्ता स्वीकार करनी ही होगी, जो रचयिता हो, पर रचना न हो, जो अनस्तित्त्व में न आयी हो, बल्कि प्राचीन और शाश्वत हो, सारांश यह कि जिस का कोई रचयिता न हो, बल्कि

अपनी ज़ात से क़ायम हो, ऐसी ही हस्ती को हम अल्लाह कहते हैं, रचना को हम ख़ुदा नहीं कहते, चाहे वह दूसरों की रचना का कारण ही क्यों न हो।

रहे बीच के 'कल्पित रचयिता,' तो आप ख़ुद फ़रमाएं कि उन को मानने का फल क्या है? आपने उन्हें इसीलिए तो माना था कि ख़ुदा के लिए रचयिता मनवाने पर आप को आग्रह था, पर इसमें आपको सफलता न मिल सकी। इस एक आवश्यकता के अतिरिक्त इन कल्पित सत्ताओं को मानने की न कोई ज़रूरत थी, न उनके मौजूद होने का कोई प्रमाण। इस प्रकार ये 'कल्पित रचयिता' जिन्हें किसी प्रमाण तथा तर्क के बिना चाहे-अनचाहे कल्पना कर लिया गया था, आप से आप अनस्तित्व के पर्दे में छिप जाते हैं।

यह एक स्पष्ट तथ्य है कि आप कोई न कोई प्राचीन तथा शाश्वत और अपनी ज़ात में मौजूद सत्ता मानने पर मजबूर हैं। या आप सृष्टि को प्राचीन तथा शाश्वत और अपनी ज़ात में मौजूद मानें या ख़ुदा को प्राचीन तथा शाश्वत और अपनी ज़ात में मौजूद स्वीकार करें—जो लोग ख़ुदा को नहीं मानते, वे सृष्टि को प्राचीन और शाश्वत मानते हैं और जो लोग सृष्टि को रचना समझते हैं, वह ख़ुदा को प्राचीन और शाश्वत और अपनी ज़ात में आप मौजूद मानते हैं—यह कदापि असभव है कि सृष्टि रचना भी हो और ख़ुदा भी। किसी वस्तु के रचना होने का अर्थ इसके सिवा और क्या है कि वह पहले मौजूद नहीं थी, फिर किसी ने इसे अस्तित्व प्रदान किया। अगर ख़ुदा और सृष्टि दोनों की दोनों रचनाएं हों, तो इसका साफ़ और खुला अर्थ यह है कि एक समय था, जबकि उन में से कोई भी मौजूद न था। प्रश्न यह है कि फिर अस्तित्व पायी हुई चीज़ें कैसे पैदा हो गयीं और अस्तित्व कहां से आ गया? मात्र अनस्तित्व और पूर्ण अनस्तित्व से तो अस्तित्व प्रकट नहीं हो सकता। कोई चीज़ भी न हो और सब कुछ मौजूद हो जाए, यह कैसे संभव है? अब या तो यह कहिए कि यहाँ कोई भी मौजूद नहीं, न सृष्टि, न ख़ुदा या यह

कहिए कि कोई न कोई प्राचीन और शाश्वत और अपनी ज़ात में आप सत्ता मौजूद है, जिस से सबको अस्तित्व मिला है, तीसरी कोई शक्ल सम्भव नहीं।

अगर आप एक प्राचीन और शाश्वत अस्तित्व मानने के लिए तैयार नहीं तो अस्तित्व की इस सारी घमाघमी का आप को इंकार करना होगा जो सृष्टि के रूप में आप के आस-पास मौजूद है। आप को मानना पड़ेगा कि यहां न अस्तित्व है, न कोई अस्तित्व वाला, अनस्तित्व के भयानक शून्य के अलावा यहां कुछ भी नहीं।

पर अगर आप अपने अस्तित्व और अपने आस-पास की सृष्टि को एक ठोस सच्चाई समझते और इस जगत को अस्तित्व-जगत सोचते हैं, तो आप के लिए अनिवार्य है कि या आप सृष्टि को प्राचीन तथा शाश्वत और अपनी ज़ात से आप मौजूद मान लें और ख़ुदा का इंकार कर दें या ख़ुदा को प्राचीन तथा शाश्वत और अपनी ज़ात में आप मौजूद मानें, मानो आप के लिए यह राह तो खुली हुई है कि आप चाहें तो ख़ुदा का इंकार कर दें, लेकिन अगर आप ख़ुदा को मानते हैं तो आपके लिए ज़रूरी है कि आप उसे प्राचीन तथा शाश्वत और अपनी ज़ात में आप मौजूद मानें। आप किसी ऐसी स्थिति की कल्पना नहीं कर सकते कि ख़ुदा तो हो पर प्राचीन तथा शाश्वत और अपनी ज़ात में आप मौजूद न हो।

'ख़ुदा का रचयिता कौन है ?' दोनों शक्लों में यह प्रश्न व्यर्थ हो जाता है। पहली शक्ल में इसलिए कि आप सृष्टि को प्राचीन और शाश्वत मानते हैं और इसके लिए किसी रचयिता को नहीं स्वीकारते। जब आपके दृष्टिकोण से ख़ुदा मौजूद ही नहीं है, तो उसे अस्तित्त्व प्रदान करने वाले का प्रश्न किस प्रकार पैदा होता है ? और दूसरी शक्ल में इसलिए कि आप ख़ुदा को प्राचीन और शाश्वत और अपने आप में मौजूद मानते हैं। जब ख़ुदा सदा से है और उसका अस्तित्व अपना है, तो यह प्रश्न कहां से पैदा हो गया कि उसे किस ने अस्ति-

त्व प्रदान किया ? दोनों ही शक्लों में यह प्रश्न स्पष्ट रूप से ग़लत है और आप अनीश्वरवादी हों या ईश्वरवादी, किसी भी दृष्टिकोण से आप के लिए इस प्रश्न के करने की गुंजाइश नहीं है।

यह शैतान का प्रपंच नहीं तो और क्या है कि एक व्यर्थ और निरर्थक प्रश्न की आड़ लेकर उस सत्ता का इंकार कर दिया जाए, जिस की निशानियां पूरी सृष्टि में फैली हुई हैं, जबकि उस प्रश्न से फिर भी छुटकारा न मिले, जिस के लिए ख़ुदा का इंकार किया गया था। अगर 'रचयिता कौन है ?' का उत्तर न मिलने के कारण आप ख़ुदा का इंकार कर देते हैं, तो इस प्रश्न का उत्तर न मिलने की वजह से आप सृष्टि का इंकार क्यों नहीं कर देते ? रचयिता के बिना आप ख़ुदा के अस्तित्व को मानने के लिए तैयार नहीं होते, पर रचयिता के बिना आप सृष्टि के अस्तित्व को स्वीकार कर लेते हैं। आप ख़ुदा को प्राचीन और शाश्वत मानने के लिए तैयार नहीं होते, पर ख़ुदा का इंकार करते ही आप सृष्टि—हर क्षण परिवर्तनशील सृष्टि—को प्राचीन, शाश्वत और अपनी ज़ात में मौजूद मान लेते हैं।

बसोख़्त अक़्ल ज़ हैरत कि ईं च बुलअज्वीस्त

(बुद्धि चकित है कि यह क्या तमाशा है)

इन लोगों के सोचने का यह ढंग है कि जब ख़ुदा को रचयिता के बिना मानना ही है तो क्यों न सृष्टि को स्रष्टा के बिना मान लिया जाए और अगर ख़ुदा प्राचीन तथा शाश्वत और अपनी ज़ात में आप मौजूद ही है तो क्यों न सृष्टि को प्राचीन, शाश्वत और अपनी ज़ात में आप मौजूद मान लिया जाए। दूसरे शब्दों में पैदा करने के इस सिलसिले को क्यों मान लिया जाए जो ख़ुदा के आगे कैसे भी नहीं बढ़ता।

क्या किसी सिलसिले को उसी समय मानना चाहिए जब वह

असीम रूप से चलता रहे और कभी समाप्त न हो ? अगर यह बात सही है तो सृष्टि में कोई सिलसिला ऐसा नहीं है जिसे माना जा सके। यहां का हर सिलसिला कहीं न कहीं जा कर अवश्य समाप्त हो जाता है, जैसे सब मानते हैं कि सृष्टि की पूरी व्यवस्था कार्य-कारण के सहारे चल रही है। हर घटना जो सृष्टि में घटित होती है, उसका कोई न कोई कारण अवश्य होता है और फिर उस कारण का भी कारण होता है, पर सृष्टि और भूत-द्रव्य का क्या कारण है ? अनीश्वरवादियों के पास इस का उत्तर नहीं है, तो क्या कार्य-कारण क्रम का इसलिए इन्कार कर दिया जाए कि वह सृष्टि या भूत-द्रव्य के आगे नहीं चलता।

एक दूसरे उदाहरण को लीजिए। सृष्टि की हर वस्तु रसायनिक तत्वों से मिल कर बनी है, फिर यह रसायनिक तत्व इलेक्ट्रोन, प्रोटोन और न्यूट्रोन का सम्मिश्रण हैं, पर इलेक्ट्रोन, प्रोटोन और न्यूट्रोन किस से बने और किस का सम्मिश्रण हैं ? किसी वैज्ञानिक के पास इसका उत्तर नहीं है, तो क्या इस सिलसिले का भी इस लिए इन्कार कर दिया जाए कि यह कुछ क़दम भी न चल सका ? अगर आप ख़ुदा को इसलिए सृष्टि का रचयिता नहीं मानते कि यह सिल-सिला आगे नहीं बढ़ता और ख़ुदा का रचयिता और उस रचयिता का रचयिता नहीं होता, तो आप को सृष्टि के हर सिलसिले, दूसरे शब्दों में सृष्टि की पूरी व्यवस्था का इन्कार करना होगा, क्योंकि यहां का हर सिलसिला कुछ क़दम पर जा कर रुक जाता है।

आप कहते हैं कि ख़ुदा को प्राचीन और शाश्वत और अपनी ज़ात में मौजूद मानना है तो क्यों न सृष्टि ही को प्राचीन, शाश्वत और अपनी ज़ात में आप मौजूद मान लिया जाए। निस्सन्देह इस प्रकार आप सृष्टि के स्रष्टा को मानने से बच जाएंगे, लेकिन क्या इसी का नाम ज्ञान-विज्ञान और अनुसन्धान है ? क्या किसी वस्तु की कल्पना करने से वह वस्तु मान्य तथ्य बन जाती है ? क्या मात्र

आप के कल्पना कर लेने से सृष्टि प्राचीन, शाश्वत और अपनी ज़ात में आप मौजूद सिद्ध हो जाएगी और आप यह तै कर लेने में न्याय करेंगे कि सृष्टि को किसी ने पैदा नहीं किया, बल्कि वह सदा से है और आप से आप मौजूद है ? और क्या आप पूरे विश्वास के साथ इस कल्पित आधार पर जीवन का भवन निर्मित कर सकेंगे ?

यह एक सच्चाई है, भले ही आप इसे मानें या न मानें—कि सृष्टि के प्राचीन, शाश्वत और अपनी ज़ात में आप मौजूद होने का कोई प्रमाण मौजूद नहीं है। अपूर्ण अनुभवों के आधार पर कुछ वैज्ञानिकों को भ्रम हो गया था कि भूत-द्रव्य अनश्वर है और इससे उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला था कि वह प्राचीन होने के साथ शाश्वत भी है, पर और अधिक अनुभवों से इसकी ग़लती स्पष्ट हो गयी। विज्ञान का आम रुझान अब यह है कि भूत-द्रव्य नश्वर है अर्थात वह न प्राचीन है, न शाश्वत। रही सृष्टि तो इस के बारे में अब यह भी अन्दाज़ा किया जा चुका है कि कितने अरब साल पहले इसकी रचना हुई थी।[1] इस स्थिति की उपस्थिति में आप यह नहीं कह सकते कि सृष्टि प्राचीन और शाश्वत है और इसका कोई रचयिता नहीं है। इसके विपरीत बुद्धि और विज्ञान की रोशनी में आप जितना आगे बढ़ते जाएँगे, आपका विश्वास दृढ़ से दृढ़तर होता चला जाएगा कि सृष्टि प्राचीन और शाश्वत नहीं, नश्वर है, अपनी ज़ात में आप मौजूद नहीं, रचना है और इसका कोई न कोई रचयिता अवश्य है।

फिर प्रश्न केवल सृष्टि की रचना का नहीं कि सृष्टि को प्राचीन और शाश्वत कह कर आप रचयिता से पीछा छुड़ा लें, प्रशासन, नियोजन, तत्वदर्शिता, पालनकर्तृत्व के जो चिह्न सृष्टि में हर ओर बिखरे हुए हैं, वह एक ज्ञाता, तत्वदर्शी, नियोजक तथा प्रशासक और अत्यन्त दयावान और कृपानिधान सत्ता की उपस्थिति की ओर खुला हुआ संकेत कर रहे हैं, तो क्या अन्धे, बहरे और चेतनाहीन

१. 'ख़ुदा है' में इस पर सविस्तार वार्ता मिलेगी।

भूत-द्रव्य में आप ये गुण देखते हैं ? अगर नहीं और बिल्कुल ही नहीं, तो खुदा के माने बिना कोई और रास्ता ही क्या है ? भूत-द्रव्य से तो सृष्टि के इन पहलुओं का स्पष्टीकरण सम्भव ही नहीं।[1]

यह एक सत्य है कि अनीश्वरवादी और ईश्वरवादी, दोनों एक ऐसी सत्ता के मानने पर विवश हैं जो प्राचीन हो और शाश्वत हो और किसी रचयिता के बिना आपसे आप मौजूद हो, अनीश्वरवादियों के नज़दीक यह प्राचीन और शाश्वत सत्ता, जो रचियता के बिना मौजूद है, भूत-द्रव्य है और ईश्वरवादियों के नज़दीक खुदा। इस दृष्टि से दोनों की स्थिति समान है—और 'खुदा का पैदा करने वाला कौन है ?' यह प्रश्न अगर खुदा-परस्तों से किया जा सकता है, तो भौतिकवादियों से भी यह प्रश्न हो सकता है कि 'भूत-द्रव्य को पैदा करने वाला कौन है ?' अन्तर जो कुछ है, वह यह है कि अनीश्वरवादी जिस भूत-द्रव्य को प्राचीन और शाश्वत मानते हैं, वह न केवल यह कि प्राचीन और शाश्वत नहीं है, बल्कि उसे स्वीकार करने से सृष्टि के अनेक पहलुओं का स्पष्टीरण कभी नहीं हो पाता और न उसे आधार बना कर सोचने और जीवन बिताने से मानव-समस्याएं हल होती हैं। इसके विपरीत ईश्वरवादी जिस प्राचीन तथा शाश्वत और अपनी ज़ात में आप मौजूद सत्ता—खुदा पर ईमान रखते हैं, उसे मानने से सृष्टि के तमाम पहलुओं का सन्तोषजनक स्पष्टीकरण हो जाता है, साथ ही इसको मान लेने और स्वीकार कर लेने को बुनियाद बना कर जीवन-भवन निर्मित करने से मानव-जीवन की सारी न हल होने वाली समस्याएं एक-एक करके हल हो जाती हैं, इसके बाद यह तै करना शायद कुछ अधिक कठिन नहीं है कि अनीश्वरवाद और ईश्वर-वाद में कौन-सा दृष्टिकोण सत्य और मानवता के लिए सफलता का कारण है और कौन-सा दृष्टिकोण असत्य और विनाश का कारण है।

---

१. 'क्या खुदा की जरूरत नहीं ?' में इस पर सविस्तार वार्त्ता की जा चुकी है।

क्या दुनिया में अंधेर है ?

कहा जाता है कि ख़ुदा होता तो दुनिया में अन्धेर न होता। हम देखते हैं कि बाढ़ आती है और वनस्पतियों, जीव-जन्तुओं और मानवों के लिए महान विनाश का कारण बनती है, अकाल पड़ता है और जीवधारी रचनाओं पर विपत्ति ढाता और अधिकाधिक धन-सम्पत्ति और प्राण की क्षति का कारण बनता है, महामारियां आती हैं और बहुत से लोग उनके हाथों मृत्यु-घाट चढ़ जाते या अपना स्वास्थ्य गंवा देते हैं। भौतिक जगत से हटकर इंसानी दुनिया में आइए तो आपको और भी अन्धेर नज़र आएगा, कमज़ोरों और ग़रीबों के लिए जीना दूभर है और उनकी जान व माल व आबरू की कोई क़ीमत नहीं। अन्यायी, उपद्रवी और दुराचारी संसार में दनदनाते फिरते हैं और कोई नहीं जो उनका हाथ पकड़ सके। भलाई, चरित्र-आचरण और मानवता पर अत्याचार हो रहा है, उसको यातनाएं मिल रही हैं और बुराई, छल-कपट और बर्बरता तथा पैशाचिकता का दौरदौरा है। लड़ाइयां होती हैं और असंख्य लोग, इन ख़ूनी लड़ाइयों की भेंट चढ़ जाते हैं, राष्ट्रों की आर्थिक तथा राजनीतिक दशा उलट-पलट हो जाती है और कभी-कभी उनके कटु परिणाम भावी नस्लों तक को भुगतने पड़ते हैं, यह सब अन्धेर नहीं तो और क्या है ? यह अन्धेर इस बात का निश्चित प्रमाण है कि किसी तत्वदर्शी, कृपाशील, सचेत तथा सर्वज्ञाता सत्ता के हाथ में सृष्टि की व्यवस्था तथा प्रशासन नहीं है, दूसरे शब्दों में यह कि ख़ुदा नहीं है।

कैसी विचित्र बात है यह कि जो घटनाएं ख़ुदाके होने के स्पष्ट प्रमाण हैं, उन्हीं को ख़ुदा के न होने का सुदृढ़ तर्क समझा जा रहा है। यह मानव-चिन्तन की विडम्बना नहीं तो और क्या है ? सच तो यह है कि सृष्टि के दो ही स्पष्टीकरण किए जा सकते हैं—

एक यह कि यहां की हर घटना कार्य-कारण के नियम के अनुसार आप से आप घटती है, उसके पीछे कोई चेतना और कोई निश्चय काम नहीं कर रहा है।

दूसरा यह कि एक सचेत और स-निश्चय सत्ता अपने निश्चय और योजना के अनुसार सृष्टि की व्यवस्था चला रही है। इन दो के अतिरिक्त तीसरा कोई स्पष्टीकरण सम्भव नहीं।

पहले स्पष्टीकरण के सिलसिले में एक कठिनाई तो यह है कि विज्ञान के आधुनिकतम दृष्टिकोण और सिद्धान्त उसका साथ नहीं दे रहे हैं। कार्य-कारण का यह क्रम जिस पर भौतिकता की इमारत खड़ी थी, विज्ञान के नये सिद्धान्तों की रोशनी में बहुत कुछ संदिग्ध हो गया है,[1] लेकिन इस वैज्ञानिक तथ्य से हट कर एक कठिनाई यह भी है कि इस सिद्धान्त के अनुसार दैवी विपदाओं का कोई स्पष्टीकरण नहीं किया जा सकता। समुद्र से मानसून उठता है और सूखी धरती की ओर रुख़ करता है, इस मानसून से एक क्षेत्र में इतनी वर्षा होती है कि फ़सलें नष्ट हो जाती हैं और बाढ़ आ जाती है, जबकि उससे मिले या निकट के दूसरे क्षेत्र में, जो मानसून के मार्ग में स्थित है, बिल्कुल वर्षा नहीं होती है या नाम मात्र को होती है। आप कार्य-कारण के नियम के अनुसार इसका क्या स्पष्टीकरण कर सकते हैं? परिस्थिति बिल्कुल शान्तिपूर्ण होती है कि यकायकी समुद्र-तट के क्षेत्र भयानक समुद्री तूफ़ान के शिकार होते हैं, समुद्र की तेज़ और तीखी मौजें थल-भाग में बहुत दूर तक घुस आती हैं और अति भयानक जान और माल की क्षति के बाद यह तूफ़ान समाप्त होता है।

प्रश्न यह है कि यह तूफ़ान उस निश्चित समय पर क्यों आया? इससे पहले या इसके बाद क्यों नहीं आया? और इस विशेष क्षेत्र

---

१. देखिए 'ख़ुदा है'

में क्यों आया ? दूर व नज़दीक के दूसरे क्षेत्रों में क्यों नहीं आया ? यही प्रश्न चक्रवातों और बर्फ़-वर्षा के विषय में भी है ? महामारी का किसी विशेष क्षेत्र में बड़ा ज़ोर होता है, निकट के दूसरे क्षेत्रोंमें महामारी होती नहीं या बहुत कम होती है। क्या आप इसका कारण बता सकते हैं कि ऐसा क्यों होता है ? फिर जहां पर महामारी का ज़ोर होता है, वहां पर भी कुछ व्यक्तियों पर महामारी का बिल्कुल भी कोई प्रभाव नहीं होता। और जो व्यक्ति महामारी की लपेट में होते हैं, उनमें से भी कुछ नष्ट होते हैं और कुछ कुछ दिनों तक बीमार रह कर अच्छे हो जाते हैं, क्या आप बता सकते हैं कि एक ही वस्तु के ये विभिन्न परिणाम क्यों निकलते हैं ? कुछ लोग इसका कारण यह बताते हैं कि कमज़ोर व्यक्ति महामारी का शिकार होते हैं और स्वस्थ तथा बलशाली बच जाते हैं, पर तथ्यपरक बात तो यह है कि यह तर्क सही नहीं है। हम देखते हैं कि महामारियों में बहुत से बच्चे–जिनमें प्रतिरक्षात्मक शक्ति अत्यधिक होती है—और युवक और शक्तिशाली व्यक्ति नष्ट हो जाते हैं और बूढ़े और कमज़ोर व्यक्ति बच जाते हैं।

आप 'संयोग' कह कर इसका स्पष्टीकरण नहीं कर सकते, क्योंकि वास्तव में यह कोई तर्कसंगत तथा सन्तोषजनक स्पष्टीकरण नहीं है। न यह कुछ गिनी-चुनी घटनाओं की बात है कि आप 'संयोग' कह कर छूट जाएं। असंख्य घटनाएं हैं जिनका स्पष्टीकरण आपको करना है।

इन तमाम घटनाओं का इसके अतिरिक्त और कई स्पष्टीकरण नहीं हो सकता कि एक निश्चय रखने वाली प्रभुत्वशील सत्ता, जो कार्य-कारण से परे है, भौतिक शक्तियों से जिस तरह चाहती है काम लेती है और जिस समय, जिस जगह और जिस तरह, जिस घटना को उचित समझती है प्रकट कर देती है। इसी सत्ता का नाम अल्लाह है।

यह स्पष्टीकरण कुछ नैसर्गिक कांडों तथा असाधारण घटनाओं के साथ मुख्य नहीं है। अगर आप गहराई के साथ विचार करेंगे तो सृष्टि के हर अस्तित्व और इस ऐहिक जगत की हर घटना का अन्तिम और सन्तोषप्रद स्पष्टीकरण यही है। कार्य-कारण का जो क्रम आपको सामान्य घटनाओं में कार्यरत दिखाई देता है, उसका अर्थ इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं कि अमुक घटना अमुक घटना के बाद घटित हुई या बहुत से बहुत यह कि अमुक घटना अमुक गटना का परिणाम है। जैसे आग जलाने के नतीजे में ताप की अनुभूति हुई, यद्यपि इस प्रकार के तमाम उदाहरणों में यह सिद्ध करना अति कठिन है कि बाद की घटना वास्तव में पहली ही घटना का परिणाम है! पर यह बात कि एक घटना दूसरी घटना का परिणाम क्यों है और इन में एक दूसरे के लिए अनिवार्य होने की बात क्यों पैदा हो गयी, कार्य-कारण का नियम इसका कोई उत्तर नहीं देता। हम जब बराबर इसका अवलोकन और अनुभव करते हैं कि एक घटना के बाद दूसरी घटना प्रकट होती है, तो हम ऐसा अनुमान करते हैं कि दूसरी घटना पहली घटना का परिणाम है और दोनों एक दूसरे के लिए अनिवार्य हैं, पर यह जानने का हमारे पास कोई साधन नहीं कि ऐसा 'क्यो' होता है ? मानो कार्य-कारण का नियम केवल 'क्या' का उत्तर है 'क्यों' का नहीं, हालांकि मूल महत्व 'क्यों' के उत्तर का है, जिसे बताने में अनीश्वरवादी बिल्कुल विवश हैं।

इस मूल प्रश्न का इसके अतिरिक्त कोई उत्तर सम्भव नहीं कि एक सर्व शक्तिमान तत्वदर्शी, रचयिता तथा नियोजक ने अपनी इच्छा और अपनी तत्वदर्शिता से प्राकृतिक नियम बनाये और सर्व-श्रेष्ठ शक्ति से इन्हें सृष्टि में लागू। किया फिर वही है जो अपनी इच्छा और तत्वदर्शिता के अनुसार इन नियमों से काम लेता है और अपनी इच्छा से इस सृष्टि की व्यवस्था चलाता है।

प्राकृतिक नियमों का निस्सन्देह महत्व है, पर मूल महत्व सृष्टि के शासक की इच्छा और निश्चय का है। ख़ुदा ने इन नियमों को बनाया है, और वही इन नियमों को लागू कर रहा है, वह इन नियमों का पाबंद है, न उनके अधीन। वह नियामक और शासक है और उन नियमों से उच्च और श्रेष्ठ है। वह चाहे तो प्राकृतिक नियमों द्वारा सृष्टि की व्यवस्था चलाए और चाहे तो उनसे हट कर सृष्टि-कार्यों की व्यवस्था करे।

इस उत्तर से सृष्टि की तमाम सामान्य और असामान्य घटनाओं का स्पष्टीकरण हो जाता है और सृष्टि के मूल प्रश्न 'क्यों?' का उत्तर भी मिल जाता है। कार्य-कारण के सिलसिले की सर्वव्यापकता बाक़ी रहे या विज्ञान के नए-नए आविष्कारों से वह बाक़ी न रहे, दोनों स्थि-तियों में यह स्पष्टीकरण अपनी जगह पर क़ायम रहता है, क्योंकि इस स्पष्टीकरण के अनुसार असल चीज़ कार्य-कारण का क्रम नहीं, अल्लाह का सामर्थ्य और तत्वदर्शिता है—सृष्टि के पूरे प्रश्न का यही एक सन्तोषप्रद तर्कसंगत उत्तर है, इस के अतिरिक्त कोई उत्तर न सन्तोषप्रद है, न तर्क संगत।

प्राकृतिक घटनाओं के पीछे कोई तत्वदर्शिता नहीं होती और वे पूर्णतः अन्याय और निर्दयता का प्रदर्शन हैं। इस प्रकार का भ्रम केवल उस व्यक्ति के मन में आ सकता है, जिस की दृष्टि अति संकुचित हो और जो जल्दबाज़ी से नतीजे निकाल लेने का आदी हो। जो व्यक्ति सृष्टि का गहन अध्ययन करेगा, वह निश्चय ही इस विश्वास तक पहुंच कर रहेगा कि यह सृष्टि तत्वदर्शितापूर्ण एक महान नियोजन है, जिसका हर अंश अपने भीतर अगणित तत्व-दर्शिता रखता है और यही वह विश्वास है जो विज्ञान द्वारा हमें प्राप्त होता है—और इस विश्वास तक पहुंचने वाला इंसान यह कभी भी नहीं सोच सकता कि प्राकृतिक घटनाओं के पीछे कोई तत्वदर्शिता काम नहीं कर रही है।

सच तो यह है कि घटनाएं न केवल भौतिक जगत के लिए अगणित लाभ रखती हैं, बल्कि मानव-जगत के लिए भी उनके लाभ महान हैं और उन लाभों से हट कर उन का यही एक लाभ क्या कुछ कम है कि उनके कारण इंसान की बन्द आंखें खुल जाती हैं और वह संसार की अनश्वरता और अपनी विवशता को सिर की आंखों से देखने लगता है। धन और सत्ता पा कर इंसान दो सच्चाइयों से अपनी आंखें बन्द कर लेता है, एक यह कि सांसारिक धन-सम्पत्ति अनश्वर है और दूसरे यह कि इंसान एक निःशक्ति और विवश दास है, इसके सिवा इसकी कोई वास्तविकता नहीं। ये घटनाएं इंसान पर इन दोनों मौलिक वास्तविकताओं को खोल देती हैं—

कल पांव एक कासा-ए-सर पर जो आ गया,
यकसर वह इस्तख़्वान, शिकस्तों से चूर था।
कहने लगा कि देख के चल राह बेख़बर!
मैं भी कभू किसू का सरे पुर ग़रूर था।[1]

—मीर

आज का व्यक्ति धन-सत्ता के अतिरिक्त वैज्ञानिक प्रगतियों के नशे में भी मस्त है। वह समझता है कि उस ने प्रकृति पर विजय पा ली है। वह कहता है कि उसे ख़ुदा को मानने की ज़रूरत नहीं, क्योंकि जो शक्ति ख़ुदा से सम्बद्ध की जाती थी, वह सब उसे प्राप्त है। कम्युनिज़्म के ध्वजावाहक और उनके रूसी इमाम इस प्रकार की बातें आए दिन कहते रहते हैं।

ये प्राकृतिक घटनाएं भली-भांति स्पष्ट कर देती हैं कि इन दावों

---

१. कवि कहता है कि कल मेरा पांव जो एक खोपड़ी पर आ गया, वह खोपड़ी टूटी-फूटी हड्डियों का योग थी। वह खोपड़ी कहने लगी कि ऐ बेखबर! रास्ता देखकर चल, (यह समझो कि) मैं भी कभी किसी का दंभी सिर थी।

की वास्तविकता क्या है, देखने वाली आंखें देखती हैं कि प्राकृतिक घटनाओं के मुक़ाबले में रूस और अमरीका सरीखे वैज्ञानिक प्रगति के केन्द्र देश इसी तरह विवश हैं जैसे दूसरे देश और ख़ुश्चेव, माउत्ज़े तुंग और चो. एन. लाई जैसे साम्यवादी और अनीश्वरवादी नेता भी वैसे ही विवश व्यक्ति हैं जैसे दूसरे व्यक्ति, इस वास्तविकता का उद्घाटन कोई सामान्य उद्घाटन नहीं है। यह उद्घाटन इंसान के पूरे जीवन का रुख़ बदल देता है और उसे दंभी, अभिमानी, अन्यायी और उपद्रवी बनने से बचाता और हितैषी, साक्षात नैतिकता और मानवता की प्रतिमूर्ति बनाता है। सच तो यह है कि यही एक लाभ बड़ी सी बड़ी हानि पर भारी है और इस बात का प्रमाण है कि ये घटनाएं भी अल्लाह की तत्त्वदर्शिता, नियोजन तथा उसकी दया और कृपा का ही प्रतिबिम्ब हैं।

निश्चय ही इन घटनाओं के कारण बहुत से लोग मौत के घाट चढ़ जाते हैं और उनकी मौत से हर भावनायुक्त व्यक्ति को दुख होता है, पर इस दुख से बचने की शक्ल क्या है? घटनाएं यदि घटित न हों, तब भी लोग मौत का शिकार होंगे और कोई न कोई वस्तु मौत के लिए बहाना बन जाएगी। मौत अति दर्दनाक है, पर हर जीवधारी के लिए निश्चित है मौत, चाहे किसी भी शक्ल में हो, मरने वाले के लिए समान हैसियत रखती है। इंसान चाहे, नातेदारों, श्रद्धालुओं और आधीनों के जमघटे में मरे या उसे बिलकुल एकान्त में मौत आए, दोनों हालतों में उसे मौत की कटुता चखना पड़ेगी और सब कुछ छोड़ कर ख़ाली हाथ दुनिया से जाना होगा—

चू आहंगे रफ़्तन कुनद जाने पाक
चे बर तख़्त मर्दन चे बर रुए ख़ाक। —सादी

(जब जान निकलती है, तो तख़्त पर मरना क्या, धरती पर मरना क्या! दोनों बराबर हैं)

यह है भौतिक जगत के उस 'अंधेर' की वास्तविकता, जिसे ख़ुदा के न होने के प्रमाण में प्रस्तुत किया जाता है। अब इंसानी दुनिया

के 'अंधेर' पर विचार कीजिए। प्रश्न यह है कि मानव-जगत के भयानक चित्र को प्रस्तुत करने से अनीश्वरवादियों का उद्देश्य क्या है ? क्या इंसान का अन्याय व अत्याचार इस बात का प्रमाण है कि ख़ुदा नहीं है ? क्या आप सृष्टि के लिए किसी रचयिता और व्यवस्थापक को उस समय मानेंगे, जब इंसान को मात्र विवश पाएंगे ? क्या आप ख़ुदा को सिर्फ़ उस समय मानेंगे जब मनुष्य अपने बल से न नेकी कर सके न बुराई ? या क्या आप का विचार यह है कि बुराई के सार्वजनिक बन जाने के बाद भी संसार में अंधेर न हो ? क्या तत्त्वदर्शिता और न्याय का तक़ाज़ा यह है कि बुराई और अन्याय के सार्वजनिक होने का परिणाम अच्छा हो और नेकी के सार्वजनिक होने का फल बुरा या दोनों का परिणाम समान हो ? आख़िर आप कहना क्या चाहते हैं ?

सच तो यह है कि मानव-जगत की वर्तमान वस्तुस्थिति कदापि इस बात का प्रमाण नहीं है कि ख़ुदा नहीं है। यह केवल इस बात का प्रमाण है कि इंसान चेतनायुक्त तथा अधिकारपूर्ण है, वह स्वतंत्र है, चाहे वह नेकी का रास्ता अपनाए या बुराई और पैशाचिकता की प्रतिमूर्ति बन जाए। आजकल के इंसानों की भारी संख्या ने अपने स्वतंत्र निश्चय से बुराई और अन्याय और अत्याचार का मार्ग अपनाया। फल यह निकला कि संसार बिगाड़ और उपद्रव से भर गया। अगर इंसानों की भारी संख्या नेकी के रास्ते पर चलती, तो वस्तुस्थिति इसके विपरीत होती और संसार सुख-शांति और भलाई और मानवता की नेमतों से मालामाल होता।

अगर इंसान चेतना और अधिकार का स्वामी न होता, तो वह नेकी की तरह बुराई और अन्याय और उपद्रव की राह भी न अपना सकता था। इस स्थिति में मानव-जगत निश्चय ही 'अंधेर' से पाक होता, पर इंसान न होता, पत्थर, पेड़ या पशु होता और उन्हीं की तरह प्रकृति के लगे-बंधे तरीक़े पर विवशतापूर्ण जीवन बिताता।

यही नहीं मानव-जगत संस्कृति, ज्ञान-विज्ञान की तमाम प्रगतियों से भी वंचित होता, क्योंकि ज्ञान-विज्ञान और संस्कृति, इन में से हर वस्तु का अस्तित्व और उसका सारा विकास इसी 'अधिकार' का उपकृत है।

इंसान के चिन्तन तथा अधिकार का स्वामी होने से कदापि यह सिद्ध नहीं होता कि ख़ुदा नहीं है। इस के विपरीत यह इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि ख़ुदा मौजूद है। आप ख़ुदा का इंकार करने के बाद इंसान के चिन्तनयुक्त और अधिकारपूर्ण होने का कोई स्पष्टीकरण नहीं दे सकते। चिन्तनहीन, निश्चयहीन और अधिकारविहीन भूत-द्रव्य की बलयुक्त व्यवस्था में चेतना, निश्चय और अधिकार कहां से प्रकट हो गये? लेकिन अगर आप एक चेतनायुक्त, निश्चयपूर्ण और अधिकार तथा प्रभुत्व के स्वामी सत्ता को सृष्टि का रचयिता मानते हैं, तो इंसान के अधिकार और चेतना का स्वामी होने का आप से आप स्पष्टीकरण हो जाता है। इंसान की चेतना, निश्चय और अधिकार अल्लाह की चेतना, निश्चय और अधिकार का प्रतिबिम्ब है। इसी तथ्य की ओर क़ुरआन मजीद इन शब्दों में संकेत करता है—

'तो जब मैं उसे ठीक तरह से बना दूं और उस में अपनी रूह में से कुछ फूंक दूं।'

अगर आप ख़ुदा का इंकार करते हैं, तो आप को मानना पड़ेगा कि इंसान अधिकारपूर्ण नहीं, मात्र विवश है। वह जो कुछ सोचता और जो कुछ करता है, वह विशेष रसायनिक तत्वों तथा व्यूहाणुओं के विशेष सम्मिलन का फल है। 'बल-प्रयोग' के इस दर्शन का अर्थ यह है कि आप उस स्वतंत्रता तथा अधिकार का इंकार कर दें, जिसे आप और हर इंसान स्पष्ट रूप से महसूस करता है। यही नहीं, बल्कि इस दर्शन के अनुसार कोई व्यक्ति अपने किसी कार्य का ज़िम्मेदार

नहीं रहता और इसके बाद आप विवश हैं कि धर्म, नैतिकता, क़ानून, अदालत और व्यवस्था हर चीज़ का इन्कार कर दें, क्योंकि इन तमाम बातों की बुनियाद इस बात पर है कि इंसान स्वतंत्रता और अधिकार रखता और अपने कार्यों का ज़िम्मेदार और उत्तरदायी है। तो क्या आप इन बुनियादी बातों का इन्कार करने को तैयार हैं और क्या इस के बाद मानव-समाज नष्ट होने से बचा रह सकेगा ? नहीं, नहीं, क्या उसके सुधार की कोई संभावना बाक़ी रह जाएगी ? सच तो यह है कि इंसान अपने आप ख़ुदा के मौजूद होने का बहुत बड़ा प्रमाण है और ख़ुदा के इंकार का अर्थ यह है कि आप ने मानव और मानवता सब का इंकार कर दिया—

तेरी निगाह में साबित नहीं ख़ुदा का वजूद
मेरी निगाह में साबित नहीं वजूद तेरा।

—डा० इक़बाल

इंसान भला या बुरा, जो कार्य भी करता है, उस के तत्काल परिणाम नहीं निकलते, उस से यह बात कैसे भी सिद्ध नहीं होती कि ख़ुदा मौजूद नहीं है और सृष्टि में अंधेर है। यह बात आप उस समय सोच सकते थे, जब परिणाम बिल्कुल न निकलते। सच तो यह है कि अत्याचार और बिगाड़ जब हद से बढ़ जाता है, तो प्रकृति का कोडा ज़ाहिर होता और उपद्रवियों का बल तोड़ कर के रख देता है। अगणित अत्याचारी और उपद्रवी गिरोह संसार में उभरे और अपने अमल की मोहलत समाप्त होने के बाद जीवन-पुस्तक से इस तरह मिटा दिए गए कि आज कोई उन्हें जानता भी नहीं है। इसी तरह अगर धैर्य और सहनशीलता से काम लिया जाए, तो भलाई और मानवता का बेहतर नतोजा निकल कर रहता है। यह वस्तु-स्थिति इस बात का प्रमाण है कि एक सर्वशक्तिमान तथा नियोजक सत्ता मौजूद है, जो हालात पर कन्ट्रोल करती रहती है और उन्हें एक सीमा से आगे नहीं बढ़ने देती।

जहां तक परिणाम के देर से निकलने का ताल्लुक़ है, यह कुछ नैतिक मूल्यों और बातों तक सीमित नहीं है, सृष्टि में बहुत-सी चीज़ों और बहुत-सी घटनाओं के परिणाम देर से निकलते हैं। सृष्टि को वर्तमान स्थिति तक पहुंचने में अरबों साल लगे हैं, पृथ्वी करोड़ों वर्ष की आपसी क्रान्तियों के बाद इस योग्य हो सकी है कि उस से जीवन प्रकट हो और जीव-जन्तु और मनुष्य उस पर बस सके? कृषक कुछ फ़स्लें तीन महीनों में काट लेते हैं, कुछ छः महीने में, कुछ वर्ष भर में। ऐसे ही अगर मानव-कार्यों की खेती कटने में देर लगे, तो यह विचित्र क्यों है? और यह इस बात का प्रमाण कैसे है कि ख़ुदा नहीं है।

बुराई और अत्याचार और उपद्रव के सर्वव्यापी होने से संसार की शान्ति समाप्त हो गयी है और वह घोर विपदाओं का शिकार है। यह इस बात का खुला प्रमाण है कि अनीश्वरवाद और अनैतिकता मानवता के लिए घातक है और मानव-विकास के लिए मूल महत्व भौतिक प्रगति को नहीं, धार्मिक और नैतिक मूल्यों को प्राप्त है। यह इस बात का प्रमाण भी है कि ख़ुदा, धर्म और नैतिकता प्रामाणिक तथ्य हैं। उनका स्वीकार करना मानवता के लिए कल्याणकारी है और उन का अस्वीकार करना नाश-विनाश का कारण।

हमारी किताबें

(उर्दू में)

१.	तैसीरुल क़ुरआन, हिस्सा अव्वल	फ़ोटो आफ़सेट	३.००
२.	कलीद तैसीरुल क़ुरआन, हिस्सा अव्वल	,,	१.२०
३.	ख़ुदा का इंकार क्यों ?		१.२०
४.	ख़ुदा है		१.२०
५.	क्या ख़ुदा की ज़रूरत नहीं ?		१.२०
६.	मुलहिदीन के शुबहात		१.२०
७.	ख़ुदापरस्ती मुलहिदीन की नज़र में		१.२०
८.	दावते हक़ ग़ैर-मुस्लिमों में		१.५०
९.	बच्चों के लिए इक़बाल की नज़्में		०.५०
१०.	सेक्युलर जम्हूरियत और इस्लाम		३.००
११.	शिर्क अज़ीमतरीन गुमराही		१.२०
१२.	शिर्क के असरात इंसानी ज़िंदगी पर		१.२०
१३.	मज़ाहिब और तख़्लीक़े कायनात		१.२०
१४.	इस्लाम का तसव्वुरे तौहीद		१.२०
१५.	तौहीद के असली तक़ाज़े		१.२०
१६.	तौहीद के असरात इंसानी ज़िंदगी पर		१.२०
१७.	मुहम्मदे अरबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम		१२.१०
१८.	गोश्तख़ोरी		१.२०
१९.	बुद्ध मत और शिर्क		१.५०
२०.	जैन मत और ख़ुदापरस्ती		१.५०
२१.	हिन्दू मत और तौहीद		३.००
२२.	उलमा के लिए लमहा-ए फ़िक्रया		००.७५

इदारा शहादते हक़

८०१, छत्ता शेख मंगलू, जामा मस्जिद, दिल्ली ११०००६